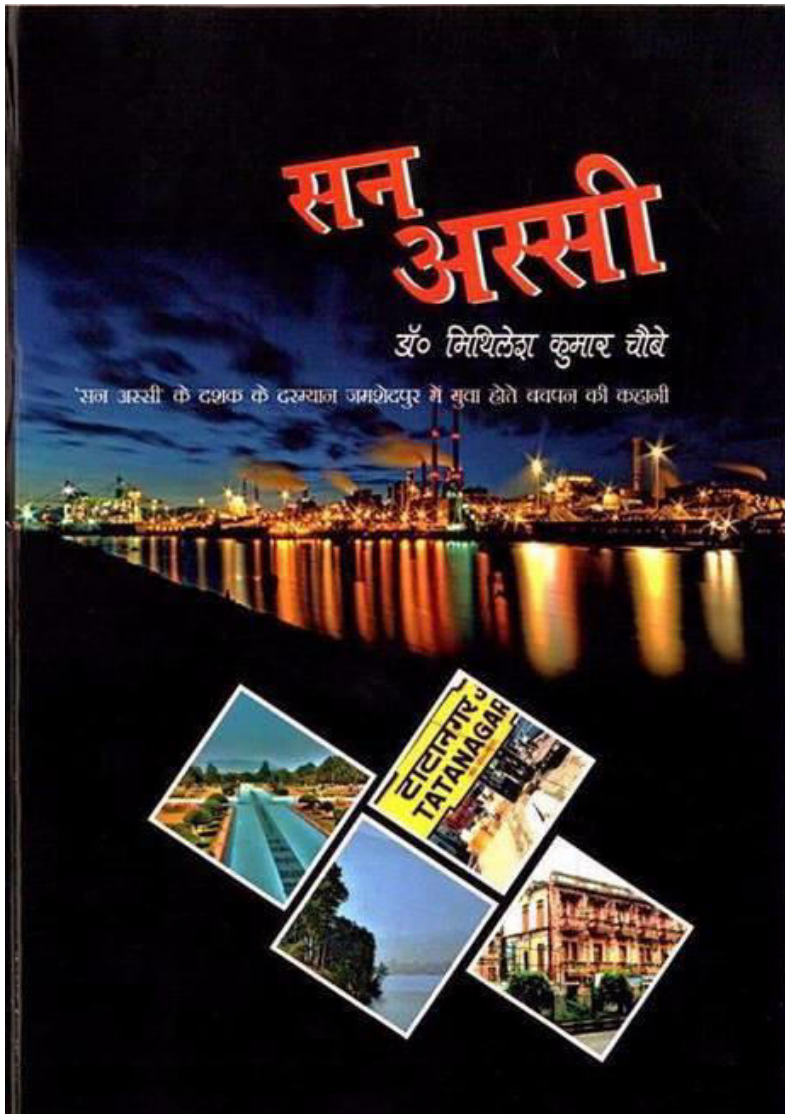




सन् अस्सी

सन् 1980-90 के दरम्यान एक छोटे से औद्योगिक शहर 'जमशेदपुर'
में युवा होते बचपन की कहानी

डॉ० मिथिलेश कुमार चौबे

('सन अस्सी' जमशेदपुर की मोहल्ला संस्कृति पर आधारित अबतक का सर्वाधिक चर्चित एवं सफलतम उपन्यास है. इसका प्रथम संस्करण 2017 में प्रकाशित हुआ था. इस उपन्यास की अबतक 500 से अधिक प्रतियाँ विभिन्न बुक स्टालों तथा ऑनलाइन माध्यमों से बिक चुकी हैं.)



मुद्रक

ज्ञानज्योति एजुकेशनल एंड रिसर्च फाउन्डेशन(ट्रस्ट) प्रेस जमशेदपुर, झारखण्ड-831005 द्वारा
मुद्रित एवं वितरित.

Title: San Assee (सन् अस्सी)

Author: Mithilesh Kumar Choubey

©Author

Edition: 2

Volume: 1

Pages: 130

Year of Publication 2016

Book Version: Paper Back

Price: ₹ 100 (Excluding Postal /Shipping Charges)

Foreign: \$4 ((Excluding postal/Shipping Charges)

Reprint: 2018

ISBN: 978-93-5267-586-9

लेखक: डॉ० मिथिलेश कुमार चौबे, 62, ब्लॉक-3, शास्त्रीनगर, कदमा, जमशेदपुर, झारखण्ड, पिन-831005 ई
मेल: drmithileshkumar@gmail.com

दूरभाष : 09334077378, 0657-2226693

सन् अस्सी

मूल्य: 150 रुपये

वर्ष : 2017

© लेखक

सर्वाधिकार सुरक्षित हैं। इस पुस्तक के किसी भी अंश को लेखक की लिखित अनुमति लिए बिना किसी भी रूप में (चक्र मुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

ज्ञानज्योति एजुकेशनल एवं रिसर्च फाउंडेशन प्रेस, ब्लॉक-3, शास्त्रीनगर, कदमा, जमशेदपुर, झारखण्ड, पिन-831005 द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित

सन् अस्सी

(सन् 1980-90 के दरम्यान जमशेदपुर शहर में युवा होते बचपन की कहानी)

एक शहर जो बसा है मेरी आँखों में,
उसके हजार अफसानों में एक अफसाना तुम्हारा भी है।

एक कंचा, एक लट्टू, एक लूडो, एक पतंग,
गुड़िया की साड़ी पर टंका एक सितारा तुम्हारा भी है।

ढूँढ लो खुद को इस अफसाने में,
इस किस्से का एक हिस्सा, तुम्हारा भी है।

यह कहानी उस दौर की है, जब फटी पतंगों को भात की लुगदी से चिपका कर आकाश में बाज की तरह उड़ाया जाता था। माँझे इतने कातिल कि अगर जगह पर लग जाएँ तो पतंगे ही नहीं बल्कि जिन्दगी की डोर भी काट दें।

.....सन् अस्सी की कहानी मूलरूप से जमशेदपुर शहर में खरकई नदी के किनारे बसी छोटी बस्तियों के युवा होते हुए किशोरवय के लड़कों के बचपन की मस्ती, किशोरावस्था के प्रेम, युवावस्था के संघर्ष, और अपने सांस्कृतिक मूल्यों को अगली पीढ़ी को सौपने की.....जद्दोजेदह की कहानी है।

लेखक

जमशेदपुर, झारखण्ड, भारत

नवम्बर 2018

प्रस्तावना

सन अस्सी जमशेदपुर के साहित्य जगत के सफलतम एवं सर्वाधिक चर्चित उपन्यासों में से एक है। इसका प्रथम संस्करण २०१७ में प्रकाशित हुआ था। इस उपन्यास की अबतक 500 से अधिक प्रतियाँ विभिन्न बुक स्टालों तथा ऑनलाइन बिक चुकी हैं।

1980 के दशक के भारत के एक छोटे के औद्योगिक शहर 'जमशेदपुर' में गंगा की खेतिहर पृष्ठभूमि से आ बसे किसान-पुत्रों का कारखाना मजदूर के रूप में रूपांतरण, और उनके जीवन शैली में होने वाले बदलावों का बारीकी से वर्णन करती यह किताब हिंदी साहित्य का गैर-जरूरी मकड़जाल नहीं बुनती, बल्कि बेहद सहजता के साथ सन अस्सी के दशक के जमशेदपुर की कहानी कहती है। 'सन अस्सी' जमशेदपुर के एक मोहल्ले के लोगों की कहानी भर नहीं है, बल्कि समकालीन समाज के सामाजिक, आर्थिक और पर्यावरणीय जीवन का जीवंत दस्तावेज भी है।

सन अस्सी के लेखक की सबसे बड़ी विशेषता उसकी 'संवाद' को 'साहित्य' के ऊपर प्राथमिकता देने की हिम्मत है। इस उपन्यास का लेखक अपनी आड़ी-तिरछी शब्दावली और अजीबोगरीब लेकिन बेहद दिलचस्प वाक्य-विन्यास के साथ नितांत ही मौलिक, अनूठा और विलक्षण प्रयोग करता है।

सन अस्सी के शुरूआती पन्नों में एक अजीब सा सकून भरा ठहराव है, लेकिन, जल्दी ही इस किताब की असमान्य गति और घटनाओं का

चक्रव्यूह आपको अभिभूत कर देता है. फिर, सन् अस्सी, 'सच' या 'फ़साना' आप इसे जो भी कहें, पाठक को आखरी पन्ने तक ठहरने नहीं देती.

आप जैसे-जैसे इस किताब के पन्ने पलटते जायेंगे, वैसे-वैसे इस किताब के पात्र आपके इर्द-गिर्द आकर खड़े हो जाएँगे और आपको अतीत की सैर पर कुछ यूँ लेते जाएँगे, मानो आपकी और इनकी बहुत पुरानी जान-पहचान हो.

सन् अस्सी का पहला हिस्सा उस दौर के किशोरों की डेस्टिनी है, और दूसरा हिस्सा उनके युवावस्था का संघर्ष. घटनाएँ बिल्कुल ही जानी पहचानी हैं, लेकिन लेखन की भाषा, शैली, प्रवाह और निरन्तरता घटनाओं को अनूठे रूप में स्थापित करती है.

यकीनी तौर पर सन् अस्सी, समय की रेत पर एक न मिटने वाला हस्ताक्षर है.

राहुल देव

12-11-2018

रघुनाथपुर, बक्सर बिहार: 2016

बारिश का मौसम समाप्त होने को है। निशिकांत जनता एक्सप्रेस से पटना जंक्शन से चल कर लगभग पचीस वर्षों बाद बक्सर जिले के रघुनाथपुर रेलवे स्टेशन पर उतरते हैं। अभी दो महीने पहले ही उन्होंने अपना पुराना मकान बेच कर 2000 स्क्वायर फीट का एक नया फ्लैट खरीदा है। फ्लैट के गृहप्रवेश की पूजा का मुहूर्त दीपावली के एक हफ्ते बाद है। उनके गाँव आने का मकसद है, अपने अस्सी साल के दादा रामसनेही तिवारी को इस अवसर पर अपने पुश्तैनी गाँव से जमशेदपुर ले जाना।

वे महसूस करते हैं कि रघुनाथपुर रेलवे स्टेशन के आस-पास का क्षेत्र अब पूरी तरह बदल चुका है। रेलवे स्टेशन पर अब टमटम वाले लगभग नहीं के बराबर हैं। उनकी जगह अब ऑटोरिक्षा वालों ने ले ली है। सामने नाश्ते की दुकानें हैं, लेकिन, उन दुकानों में अब पिआव, गाजा, सोन-पापड़ी, लकठो, पटौरा आदि जैसे खालिस देशी खाने-पीने की चीजें नहीं हैं। जगह-जगह चाइनीज फूड की छोटी-छोटी दुकानें खुल गई हैं। चिप्स के रंगबिरंगे पॉलीपैक दुकानों में लटक रहे हैं।

पान की दुकानों में दर्जनों प्रकार के गुटखे और तम्बाकू के छोटे-छोटे पैकेट लटके पड़े हैं। ऑटोरिक्षावालों से लेकर सड़क पर मोटरसायकिल चला रहे किशोरों तक के मुँह तम्बाकू और गुटखे से भरे हुए हैं। दुकानों के सामने और सड़क के दोनों किनारों पर गुटखों की हजारों खाली पन्नियाँ बिखरी पड़ी हैं। किसी से कुछ पूछिए तो वह कुछ बोलने की बजाय इशारों में जवाब देता है। और, अगर बोलना जरूरी

हो तो वह अपने मुँह को ऊपर की तरफ उठा कर बेहद अनमने भाव से दो-चार वाक्य बोल देता है.

निशिकांत, रघुनाथपुर रेलवे स्टेशन से पैदल ही अपने गंतव्य की तरफ बढ़ते हैं.

अब रघुनाथपुर स्टेशन को ब्रह्मपुर से जोड़ने वाली सड़क के दोनों किनारों के खेतों में सैकड़ों रिहाइसी मकान बन गए हैं. लगता है, आज से चालीस-पचास साल पहले जो लोग गाँवों से शहरों में नौकरियाँ करने गए थे वे या तो वापस लौट आए हैं, या फिर, आस-पास के ग्रामीणों ने गाँवों से बाहर निकल कर मुख्य सड़क के दोनों किनारों के खेतों में अपने घर बना लिये हैं. दूर कहीं सूरज डूब रहा है. इक्के-दुक्के पक्षी अपने बसेरों की तरफ लौट रहे हैं. शाम तो रोज होती है, लेकिन शहरों की गगनचुम्बी इमारतों के बीच पता ही नहीं चलता कि शाम कब ढल गई. अजीब बात है, अब गाँवों में भी शाम को बसेरों की तरफ लौटने वाले पक्षियों के झुण्ड नहीं दीखते.

निशिकांत सोचते हैं, "गाँव का कस्बे में, कस्बे का शहर में और शहर का महानगर में बदलना विकास की आधुनिक अवधारणा के अनुसार एक सहज और सामान्य प्रक्रिया है. लेकिन, गाँव के खेतों का मकानों और दुकानों में बदलना मन को डराता है. गाँव का किसान, मजदूर बने या किराने की दुकान खोले, ज्यादा अंतर नहीं. हिंदुस्तान के गाँवों में किसान आत्महत्या करते हैं, किन्तु शहरों में मजदूर धीरे-धीरे मरते हैं. गाँव में किसान भूख से मरता है और शहर में मजदूर बनकर कुपोषण, बीमारी और तनाव से. किसान जमीन का मालिक है, इसलिए उसमें ठसक ज्यादा होती है. वह अपमान की जिन्दगी नहीं जी पाता,

इसलिए अपने जीवन का अंत कर लेता है. वही किसान जब मजदूर बनकर शहर जाता है तो मालिक से नौकर बनने की नियति को स्वीकार कर जिन्दा रहने के लिए संघर्ष करता है, किन्तु ऐसा हो नहीं पाता. उसकी नियति वहाँ भी उसका पीछा नहीं छोड़ती.”

निशिकांत को अपना बचपन याद आता है. तब वे गाँव के स्कूल में सातवीं क्लास में पढ़ते थे. तब अचानक गाँव की रंगत बदलने लगी थी. अब खेत बोता कोई और था और काटता कोई और था. निशिकांत के पिता रामधनी तिवारी गाँव के दूसरे लोगों के साथ मिलकर रात-रात भर जाग कर खेतों की रखवाली करते थे, किन्तु हर महीने, दो महीने बाद गाँव के किसी न किसी घर से रोने-पीटने की आवाज आ ही जाती थी.

रामधनी तिवारी के बाप-दादा सदियों से खेती-बाड़ी करते आ रहे थे. लेकिन, बदले हुए माहौल में अब उनके लिए किसानी बूते की बात नहीं रह गई थी. जिन खेतों में कल तक हल चलते थे, वहाँ अब गोलियां चलती थीं. खेतों में अब गेहूँ की जगह बारूद बोई जा रही थी, और फसलों के रूप में लार्शें उग रही थीं.

इधर निशिकांत की अम्मा भी अपने पति और बच्चों की जान को लेकर डरी हुई थी. अतः एक दिन वह पति से बोली, “गाँव से बाहर निकालिए नहीं तो बच्चे भूखों मर जायेंगे. अगर भूख से नहीं भी मरे तो किसी दिन खेत पर सनलाईट-नक्सलाईट के चक्कर में आप मरा जाइएगा, तब हम ई छोटा-छोटा बच्चा सब को लेकर कहाँ जायेंगे?”

अगले दिन जब रामधनी तिवारी सपरिवार शहर जाने का प्रस्ताव लेकर अपने बूढ़े पिता पंडित रामसनेही तिवारी पास गए तो उनकी आँखें भर आयीं. यूँ तो पंडितजी भी खेतों में गिरती लाशों से अनभिज्ञ न थे, फिर भी बेटे को रोकने की उन्होंने आखरी कोशिश की. बोले, “लगता है हमारी पतोहूँ गाँव में घूँघट काढ़ते-काढ़ते उकता गई है? निशिकांत की अम्मा जब गाँव की औरतों के साथ बैठकर रेडियो पर सिनेमा का गाना सुनती थी तब ही हम समझ गए थे कि अब ई गाँव में ना टिकेगी.”

वह फिर बोले, “देखो बेटा, औरतजात को जनमभूमि का मोह नहीं होता. उसका पति उसको जहाँ लेकर जाता है, वह वहीं की हो जाती है. लेकिन, तुम तो पुरुष हो, अगर चले गए त इहाँ सब कुछ खतम हो जाएगा.”

रामधनी तिवारी अपने बूढ़े हो रहे बाबूजी की बात सुनकर रो पड़े और रुंधे गले से बोले, “बाबूजी, बाल-बच्चा सब का जिन्दगी के लिए सब छोड़ना पड़ेगा. अपना गाँव, जवार, खेत, और पूर्वजों की विरासत सब कुछ! जाना पड़ेगा बाबूजी ! अब कौनो विकल्प नहीं बचा है.” उत्तर में बाबूजी कलपते हुए बोले, “बेटा, उगते सूरज को तो सभी अर्घ्य देते हैं, लेकिन डूबते सूरज को अर्घ्य देने के लिए लोग साल-भर छठ व्रत का इन्तजार करते हैं. बेटा, हम बूढ़ा हो रहे हैं. हमारे मरने का इन्तजार मत करना. महीना दो महीना में एक दो बार जरूर आते रहना.”

तब सुबह आठ बजे बक्सर से एक लोकल ट्रेन खुलती थी, जो ठीक तीस मिनट बाद रघुनाथपुर रेलवे स्टेशन पहुँचती थी. यह लोकल ट्रेन यहाँ दो मिनट रुकती.

निशिकांत के परिवार को स्टेशन से विदा करने के लिए उसके दादा और गाँव के चार- पांच लोग आये थे. ट्रेन में भीड़ कम ही थी. निशिकांत को खिड़की के किनारे वाली सीट मिल गई. हरे-भरे खेतों को चीरती हुई ट्रेन पटना की तरफ बढ़ चली. निशिकांत के लिए तीन घंटे का यह सफ़र गंगा के मैदानों की वैदिक-वांग्मय की पृष्ठभूमि में हरे-भरे खेतों के मध्य विकसित भारत के अद्भुत ग्रामीण जीवनशैली का दिव्य-दर्शन था. तब उत्तर बिहार के गंगा की मैदानी ग्राम्य-संस्कृति से दक्षिण बिहार के पहाड़ों और हरे-भरे वनों से लदे-फदे इस हरित प्रदेश को जोड़ने वाली ट्रेन थी 'दक्षिण बिहार एक्सप्रेस'.

दक्षिण बिहार एक्सप्रेस से रात्रि सात बजकर पन्द्रह मिनट पर निशिकांत पटना से जमशेदपुर की तरफ रवाना हुए. बाढ़ रेलवे स्टेशन तक ट्रेन में लोकल यात्री चढ़ते-उतरते रहे. लेकिन, बाढ़ रेलवे स्टेशन के पार करते ही ट्रेन में चढ़ने-उतरने वाले यात्रियों की रफ़्तार अचानक थम गई और ट्रेन ने रफ़्तार पकड़ ली. इसके साथ ही कूपे में मौजूद यात्रीगण अपने-अपने बर्थ पर सोने की तैयारी करने लगे.

सुबह पांच बजे जब निशिकांत की नींद खुली तो रेलगाड़ी गंगा के हरे-भरे मैदानी क्षेत्र से निकल कर दक्षिण बिहार के लाल मिट्टी वाले पठार में प्रवेश कर चुकी थी. निशिकांत को चांडिल रेलवे स्टेशन के दोनों ओर खड़े काले विशाल पहाड़ किसी गुस्सैल पहरेदार की तरह लगे.

पलकें बंद होने और खुलने के बीच इतना बड़ा दृश्य-परिवर्तन! निशिकांत का बाल-मन इसे सहज ही स्वीकार नहीं कर सका.

पिता ने हँसते हुए कहा, “हमारे गाँव की गंगा की मिट्टी के सीने से अकूत अन्न उपजता है और इस पठारी भूमि के गर्भ से लोहा!”

जमशेदपुर:1980

जमशेदपुर, इस्पात बनाने वाले कर्मठ मजदूरों का एक युवा शहर!

औद्योगिक शहरों की एक विशेषता यह होती है कि आप इनके जन्म के साल को निर्धारित कर सकते हैं. इस दृष्टिकोण से जमशेदपुर जन्मा था सन् 1907 में.

अस्सी के दशक में जमशेदपुर के निवासियों की जिंदगियां तीन चीजों के इर्द-गिर्द घूमती थीं. ये थीं पोंगा, पगार और डबल पगार. शुरुआती दौर में कंपनी में काम करने वाले अनपढ़ मजदूरों ने कंपनी के समय बताने वाले सायरन को ‘पोंगा’, वेतन को ‘पगार’ और सालाना बोनस को ‘डबल पगार’ कहना आरम्भ कर दिया था. हर महीने की 1 तारीख को मिलने वाले पगार का इन्तजार मजदूर के परिवार के साथ-साथ सुदूर गाँवों में बैठे उनके वृद्ध माता-पिता भी किया करते थे.

‘डबल पगार’ या ‘वार्षिक बोनस’ जो दुर्गापूजा के ठीक पहले मिलता था, त्योहारों की रौनक बढ़ा देता था. वैसे मजदूरों के ‘डबल पगार’ का इन्तजार कर्ज देने वाले सूदखोर लोगों को सबसे ज्यादा होता था.

देश के कोने-कोने से टेक्नोक्रेट और अन्य लोगों के आगमन के कारण इस नए-नवेले औद्योगिक शहर की साझा-संस्कृति एक नए रूप में विकसित हुई. इसमें स्थानीयता के अंश बहुत कम थे. गुजराते समय के साथ शहर के लोगों ने भाषा, खान-पान, रहन-सहन और रीति-रिवाजों में बेहद सुरुचिपूर्ण सामन्जस्य स्थापित कर लिया. पता ही नहीं चला, कब जमशेदपुर शहर ने सुबह के नाश्ते में इडली-दोसा, दोपहर के खाने में चावल-दाल और शाम के नाश्ते में चाट-गोलगप्पे खाना शुरू कर दिया?

खरकई तट पर गंगा तट के बाशिंदे

1980 के दशक में जमशेदपुर का तेजी से विकास हो रहा था. इसका एक हिस्सा टाटा कंपनी के नियंत्रण में था. जमशेदपुर शहर का दूसरा हिस्सा खरकई नदी के किनारे-किनारे बसा. इसी हिस्से में कई अतिक्रमित बस्तियां बसीं. इन्हीं बस्तियों में बसे, बिहार के गंगा के मैदानी हिस्सों से लाखों की संख्या में नौकरी की तलाश में जमशेदपुर आये लोग. ये लोग फिर कभी अपने गाँव वापस नहीं लौटे. दरअसल इनमें से कुछ लोग जब बरसों बाद अपने गाँव लौटे तो वे गाँव के जीवन को स्वीकार नहीं कर पाए. शायद इसलिए, क्योंकि जमशेदपुर की नयी औद्योगिक संस्कृति ने उनके पुराने जीवन शैली को काफी हद तक बदल दिया था. अब उन्होंने जमशेदपुर में बड़ी-बड़ी बस्तियां बसायीं. मानगो, सोनारी, कदमा जैसे रिहायसी इलाकों में हजारों फ्लैट बने.

उत्तर बिहार से आये लोगों ने आरम्भ में अपनी गंगा किनारे वाली खेतिहर संस्कृति को बचाने की पूरी कोशिश की.

अस्सी के दशक में जमशेदपुर में 'होली' और 'चैता' जैसे भोजपुरी लोकगीत सामूहिक रूप से उत्तर बिहार के लोगों द्वारा गाये जाते थे। इन गीतों की विशेषता यह होती थी कि इनमें सुनने वाले कम होते थे और गाने वाले ज्यादा। मतलब, इनमें सामूहिक गायन की परम्परा थी। 1980 के दशक में शहर के बागबेड़ा, आदित्यपुर, गोविंदपुर जैसे इलाकों में भोजपुरी लोकगीत गाने वालों की कई मंडलियाँ थीं।

गंगा किनारे के लाखों किसान-पुत्र जब मजदूर बनकर जमशेदपुर आये तो वे अपने साथ लोक-आस्था से जुड़े छठ नामक एक त्यौहार भी साथ लाये। सूर्य की उपासना का यह त्यौहार कई अर्थों में छोटानागपुर के प्रकृतिपूजक आदिवासी समाज के त्योहारों जैसे: सरहुल, करमा और सोहराई जैसा ही था।

1980 के आरम्भिक सालों में खरकई नदी के घाट के आस-पास का इलाका लगभग जनविहीन था और नदी-जल इतना स्वच्छ और पारदर्शी कि नदी की तलहटी में नाचती मछलियाँ भी दिख जायें।

1970 के दशक से ही खरकई और स्वर्णरेखा के तट, छठ के दीयों से जगमग हो उठे, छठ के लोकगीतों की मधुर स्वर-लहरियों से इस्पातनगरी का औद्योगिक वातावरण गुंजायमान हो उठा और बिहार के लोक-आस्था का प्रतीक छठ-व्रत बिहार के ग्रामीण अंचल से निकल कर जमशेदपुर में एक विशुद्ध शहरी व्रत परम्परा का आकार लेने लगा।

यहाँ के पढ़े-लिखे समाज में लोक-आस्था के मुद्दों को चुनौती देने वाली किसी भी विचारधारा की कोई जंग नहीं छेड़ी गई, बल्कि लोक-आस्था को बेहद सम्मान के साथ भारतीय संस्कृति के एक अनिवार्य

और अभिन्न अंग के रूप में अपने वैज्ञानिक दृष्टिकोण में शामिल कर लिया गया.

यही वजह थी कि 'छठ के गीत' बिहार के देहात से निकलकर जमशेदपुर के बहुभाषीय, बहुसांस्कृतिक परिवेश में लोक-राग के रूप में अंकित हो गये. अपनी पवित्रता, व्रतधारियों की प्रचंड आस्था और आडम्बरपूर्ण आनुष्ठानिक निर्लिप्तता की वजह से यह त्यौहार सहज ही जमशेदपुर की बहुसांस्कृतिक छटा का अभिन्न हिस्सा बन गया. यहाँ तक कि जमशेदपुर के सीमावर्ती नक्सल प्रभावित जिलों में माओवादी विद्रोहियों की माताएं भी पूरी श्रद्धा के साथ अपने नास्तिक हो चले पुत्रों के जीवन के लिए छठ मैया के सामने अपना आँचल फैलाने लगीं.

दिवाली के छः दिन बाद मनाए जाने वाले इस महापर्व की तैयारी तो महीने भर पहले ही शुरू हो जाती थी. मोहल्ले के बच्चे जब झुण्ड बनाकर हाथ में फावड़ा, कुदाल और झाड़ू लेकर खरकई नदी-घाट की तरफ रुख करते तो छठ पूजा के आरम्भ की अनौपचारिक घोषणा हो जाती.

फिर शुरू होती घाटों की सफ़ाई और बालू के मुंडेर बना कर घाटों का बंटवारा.

इस दौरान नदी के बालू पर कबड्डी, क्रिकेट, लंबी-कूद, दौड़ आदि का दौर चलता रहता. बच्चों के लिए छठ-घाट का एक अन्य आकर्षण भी था- दीपावली के बचे हुए पटाखे. दीपावली के अगले दिन, रात के बिनफटे पटाखे जमा करने का अभियान शुरू होता. इस क्रम में

दीपावली के बचे हुए पटाखे के साथ इन्हें मिला कर धूप में सुखाया जाता. ये पटाखे छठ-घाट पर फूटते.

छठ-घाट पर पटाखे छोड़ने का अजब आकर्षण था. घाट पर होममेड रॉकेट गजब ढाते. इन होममेड रॉकेट का निर्माण दीपावली के कुछ दिनों पहले ही शुरू हो जाता था. सहजन की सूखी हुई लकड़ी को जला कर काठकोयला बनता, फिर उसे पीसकर उसमें शोरा और गंधक का पाउडर मिलाया जाता. इसके बाद दरजी के यहाँ से धागे की खाली रीलें खरीदी जातीं और उसमें बारूद भर कर झाड़ू की सींक के एक कोने पर बांध कर अगरबत्ती से उसमें आग लगाई जाती. छठ-घाट पर ये होममेड रॉकेट कहर ढाते, जो अक्सर किसी गुस्सैल चाचा की धोती में घुसने का प्रयास करते. घाटों पर घूँघट ओढ़ कर बैठी नयी-नवेली दुल्हनें और शादी वाली सूट पहने शादी के बाद पहली बार ससुराल आकर सालियों के बीच डींगें हांकते जीजाजी भी इस रॉकेट के निशाने पर होते.

नवम्बर के पहले सप्ताह में शहर में सर्दियों की हलकी थपकी गालों पर पड़ने लगती.

पहले अर्घ्य के लिए दोपहर से ही खरकई के घाट पर जाने की तैयारी शुरू हो जाती. इसी दिन पहली बार टिन के बक्से से स्वेटर निकलता. नेफथलीन की गंध को कम करने के लिए इसे छत पर धूप में डाला जाता.

शाम होते-होते, लोकगीतों से पूरा माहौल भक्तिमय हो जाता. महिलायें पूरी तन्मयता और भक्ति-भाव के साथ छठ माता से याचना करतीं

“रूनकी-झूनकी बेटी मंगिले, पढ़ल पंडितवा दामाद.”

इस सैकड़ों वर्ष पुराने लोकगीत में ‘बेटी’ और ‘शिक्षा’ के प्रति प्राचीन भारतीय लोकजीवन के लगाव का बोध होता है. युवा माताएँ अपने नवजात शिशुओं को गुलाबी कम्बल में लपेट कर घाट पर आतीं और उन्हें माता बनने का सौभाग्य देने के लिए छठ-मैया का धन्यवाद करती एवं अपने शिशु के चिरंजीवी होने का आशीष मांगतीं. रातभर रोने वाले शिशु भी नदीघाट पर चुप हो जाते और टुकुर-टुकुर आस-पास के माहौल को निहारते. जिनकी नई-नई शादी हुई होती वे शादी का सूट पहन कर घाट पर आते. छठ घाट, पूजा-पाठ के अलावा शहरी फैशन दिखाने का एक आधार बनता.

जिन युवा लड़कियों की शादियाँ तय हो रही होती थीं, छठ-घाट पर लड़के वालों द्वारा उनको छिप कर देखे जाने की संभावना बनी रहती थी. अतः शादी योग्य लड़कियाँ बेहतरीन-से-बेहतरीन कपड़े पहनकर और पूरी तरह सज-धज कर छठ-घाट पर जातीं. हालाँकि, नयी नवेली दुल्हने, घुंघट की ओट से ही छठ-घाट की मर्यादा बनाये रखतीं.

छठ की रात, रतजगे की रात होती. घर पूरी रात करीबी रिश्तेदारों से भरा रहता. रात के वक्त घर पर पुरुष वर्ग लिट्टी-चोखे का आयोजन करता. इसमें आटा गूँथने, सत्तू तैयार करने, और चोखा-चटनी बनाने के दौरान हर व्यक्ति अपनी-अपनी पाक-कला का प्रदर्शन करता.

खरकई तट पर बसी बस्तियाँ

खरकई की बाढ़ वाली जमीन पर बसा निशिकांत का मोहल्ला, उत्तर बिहार से रोजी-रोटी की तलाश में जमशेदपुर आये लोगों से भरा पड़ा था. ईंटों के बने छोटे-छोटे घर, घरों के ऊपर एस्बेस्टस की छतें, और घर के बगल की खाली जमीन पर कद्दू, नेनुआ और कोहड़े के लत्तर. पूरे मोहल्ले में एक सरकारी चापाकल और दो-चार घरों में कच्चे-पक्के कुएँ. शौच, नहाने और कपड़े धोने के लिए खरकई नदी. मतलब, सारा कुछ गाँव जैसा ही था, किन्तु यहाँ पर बिजली भी थी, जो थोड़ी देर के लिए ही सही प्रतिदिन एक- दो बार जरूर आ जाती थी.

लेकिन, निशिकांत जल्दी ही समझ गए कि जमशेदपुर गाँव नहीं है. निशिकांत के बाबूजी गर्म-गर्म, लाल-लाल लोहा कंपनी की भट्टी में पका कर रोज देर रात अपने एक कमरे वाले एस्बेस्टस के मकान में लौटते. गर्मी और उमस से भरे कमरे में उनके पसीने और कपड़े में लगे ग्रीस और तेल की बदबू फैल जाती.

एक दिन तो अम्मा बोल ही पड़ी, “आप गाँव पर जब खेत से काम करके घर लौटते थे, तब तो आपके देह से इतनी बदबू ना निकलती थी.” जवाब में निशिकांत के बाबूजी खिसियाते हुए बोले, “भाड़ में जाए देह की बदबू. पेट-भर रोटी तो मिल जाती है इहाँ!” वह फिर निशिकांत को आवाज लगा कर बोले, “अरे, निशिकांत टीवी चलाओ रे! देखें का हुआ इंडिया-पाकिस्तान के वन डे किरकेट मैच में!”

निशिकांत ने उत्तर दिया, “बाबूजी, टीवी का स्क्रीन झिलमिला रहा है. लगता है अम्मा ने फिर से टीवी का एंटीना पर आपका बुशर्ट धूप में सूखने के लिए पसार दिया है.”

बाउजी ने खिसिया कर अम्मा की तरफ देखा और अम्मा ने गुस्से से निशिकांत की तरफ. फिर अम्मा खिसिया कर बोली, “बिजली का भोल्टेज डाउन है. देखते नहीं हैं, टेबुल फैन ऐसे चल रहा है जैसे कोई छोटा बच्चा जबरदस्ती स्कूल भेजे जाते समय अपनी अम्मा को रोते-रोते टाटा करता है.” इसके बाद, बाबूजी अपना सोलह साल पुराना दहेजू रेडियो निकाल कर, क्रिकेट की कमेन्ट्री लगाने लगे.

मोहल्ले में हर दो-चार दिन पर उत्तर बिहार से दस-दस बीघा जमीन छोड़ कर आये किसान-पुत्रों में बित्ता- बित्ता भर जमीन के लिए सर-फुटौवल होता था. किसी के घर की नाली का पानी रोक देना मर्दानगी मानी जाती थी. लोग सरकारी जमीन अतिक्रमित करने के नए-नए हथकंडे अपनाते. कई लोगों ने तो हनुमानजी को अतिक्रमण का देवता ही बना डाला था. मतलब ये कि जमीन की जिस लड़ाई को वे गाँव में अधूरा छोड़ आये थे, वही लड़ाई अब यहाँ भी नए रूप में लड़ी जा रही थी.

सन् अस्सी की किशोर संस्कृति

1980 के दशक में टाटा स्टील एक सोची समझी नीति के तहत जमशेदपुर के मुख्य हिस्से में एक औद्योगिक समाज का विकास कर रही थी. कम्पनी ने कर्मचारियों के रहने के लिए कदमा, सिदगोड़ा, बर्मामाइन्स, एग्रिको जैसे आवासीय क्षेत्रों का विकास कर हजारों की संख्या में एक-दो कमरों वाले वर्कर्स क्वार्टर्स बनवाए. इन क्वार्टर्स के बीच छोटे- बड़े खेल के मैदान थे. इन मैदानों में कंपनी और गैर-कंपनी इलाकों के लड़के क्रिकेट, फुटबाल और दूसरे खेल खेलते. इन्हीं खेल के मैदानों के इर्द-गिर्द जमशेदपुर की नयी युवा संस्कृति विकसित हुई.

1980 के दशक में शहर के हर खेल के मैदान में किशोर लड़के आपस में चंदा करके गणेश पूजा और सरस्वती-पूजा करते. चंदा काटने से लेकर मूर्ति विसर्जन तक एक बेहद दिलचस्प सामूहिकता का माहौल बनता. इस प्रक्रिया में मुख्य रूप से सामुदायिकता के पांच अलग-अलग चरण थे- चंदा काटना, पंडाल बनाना, मूर्ति और प्रसाद खरीदना, लाउडस्पीकर पर फ़िल्मी गाने बजाना और मूर्ति का विसर्जन करना. इसमें छोटे स्तर पर बड़े मजे थे. एक सीक्रेट ग्रुप भी होता था जो पूजा का चंदा नहीं देने वालों और लाउडस्पीकर की तेज आवाज को लेकर आयोजन मंडली के बच्चों को धमकाने वालों के खिलाफ रात के वक्त गमले तोड़ने और बिजली के बल्ब फोड़ने की कार्रवाई करता. आयोजन मंडली में अक्सर एक सदस्य ऐसा भी होता, जो शिकार की बेटी से एकतरफा प्रेम करता. वह अक्सर सबकी निगाहें बचा कर लड़की के बाप के सामने सीक्रेट ग्रुप के सदस्यों का नाम प्रगट कर देता था. उसके बाद तो सीक्रेट ग्रुप के सदस्यों की दुश्मन देश के गुप्तचरों से भी ज्यादा दुर्गति होती थी. किसी किशोर लड़की के बाप की नई-नवेली मारुति मारुति 800 को बैंक कराने के लिए फोसला ग्रुप के 10-12 सदस्य यँ ही आ जाते. 'अंकल आने दो, आने दो ... थोड़ा सा और आने दो' की कई आवाजों से अंकल अक्सर कंप्यूज हो कर कार को पास की किसी नाली में घुसा देते. और फिर, अंकल की फटकार के डर से फोसला ग्रुप चुपचाप वहां से खिसक लेता.

लाउडस्पीकरवाले के भाड़े के पैसे वसूलने के चक्कर में कमेटी के सदस्य रात-रात भर जाग कर फ़िल्मी गाने बजाते. अगर किसी लड़की का छोटा भाई आकर दीदी के नाम से किसी खास गाने की गाने की

फरमाइश कर दे तो समझ लो उस गाने का रिकार्ड घिस गया. उस दौर में लाउडस्पीकर पर फ़िल्मी गाने बजा कर प्यार का इजहार होता था, जो अखबार के विज्ञापन की तरह टारगेट तक तो पहुँचता था, किन्तु इसका असर कम ही होता था.

सरस्वती पूजा के अवसर पर निशिकांत अक्सर यजमान बनते, और उपवास के नाम पर सुबह में ही दो केले, दो अमरूद, दो सेब और एक गिलास दूध पेट के अंदर भेज कर अगले राउंड का इंतजार करते.

चीन जैसे 'मैं साथ हूँ' बोलकर पाकिस्तान को हिंदुस्तान के खिलाफ चढ़ाता है, ठीक उसी तरह बचपन में कुछ कमीने दोस्त 'मैं तेरे साथ हूँ, डरना नहीं है', कहकर किसी से भी भिड़वाकर पिटवा देते थे.

तब, जमशेदपुर में सर्दी के गुलाबी मौसम की शुरुआत नवम्बर के महीने में हो जाती, और नये साल के जश्न की शुरुआत दिसम्बर के पहले सप्ताह में.

ग्रीटिंग्स कार्ड का चलन अब शहर में शुरू हो चला था. सड़कों के किनारे ठेलों पर ग्रीटिंग्स कार्ड बिकते थे. किताबों में छिपा कर या किसी और तरीके से ग्रीटिंग्स कार्ड का लेनदेन होता. इसी क्रम में इकरार और इनकार के छुपा-छुपी का खेल चलता. कितने ही ग्रीटिंग्स कार्ड खरीदे जाते, उनपर उम्दा-उम्दा शेर लिखे जाते, लेकिन वे डर और झिझक की वजह से मंजिल तक वे पहुँच ही नहीं पाते थे. कई बार ऐसा होता कि ग्रीटिंग्स कार्ड में लिखने की चाह कुछ और होती किन्तु लिख कुछ और देते. लड़की के नाम के पहले संबोधन में 'माई डीयर' या 'मेरी प्रिय' लिखते समय हाथ दस बार कांपते और कलेजा

उछल कर हलक तक आ जाता. दूसरी गंभीर समस्या ग्रीटिंग्स कार्ड के अंत में अपने नाम के पहले अपना परिचय लिखने की होती. अब स्कूल में फ्रीस माफ़ी वाले आवेदन-पत्र की तरह इसके अंत में 'आपका आज्ञाकारी' तो लिख नहीं सकते थे. आज के लौंडे होते तो 'आदरणीया' और 'आपका आज्ञाकारी छात्र' लिख कर बड़े ही मजाकिया अंदाज में अपनी दिल की बात कह देते.

तब 'इश्क' मजाक नहीं था. इसकी बुनियादी औपचारिकतायें थीं. इश्क के शुरूआती दौर में औपचारिकता बहुत मायने रखती थी. प्रेमपत्र लिखने का एक स्पेशल फार्मेट होता था. यह एक बेहद गंभीर परीक्षा थी. यह एक ऐसे आग का दरिया था, जिसमें डूब कर ही पार उतरा जा सकता था. तब इश्क करने के अपने नियम थे और अपनी रवायते थीं. धर्मवीर भारती के 'गुनाहों के देवता' के 'सुधा' और 'चंद्र' वाले हालात भले न हों लेकिन 'देव डी' के इश्क का नया नजरिया 'तू नहीं तो कोई और सही' का वक्त आने में अभी 25 साल बाकी थे.

'संबोधन' की औपचारिकता की उधेड़बुन में दो-तीन ग्रीटिंग्स कार्ड तो यूँ ही बर्बाद हो जाते. एक कार्ड की कीमत तब पांच से दस रुपये होती थी. ग्रीटिंग्स कार्ड वाले भी इश्क के बुखार के मरीजों से पूरी कीमत वसूलते थे. वे भी जालिम ज़माने के साथ थे कमीने! अक्सर, तीन-चार ग्रीटिंग्स कार्ड बर्बाद करने के बाद जेब खर्च के सारे पैसे ख़त्म हो जाते और 'इश्क का भूत' भी कुछ समय के लिए उतर जाता. वैसे, मामला आगे बढ़ने पर खर्च और बढ़ जाता. प्रेमिका तो कम गोलगप्पे खाती लेकिन साथ आई उसकी सहेली तीस-तीस गोलगप्पे खा कर डकार भी नहीं लेती थी.

निशिकांत के कुछ यार-दोस्त तो मन-मसोस कर सिर्फ 'हैप्पी न्यू ईयर' ही लिख कर लड़की की सहेली के हाथों ग्रीटिंग्स कार्ड भिजवा देते और दो-तीन दिन तक लड़की के सामने जाने से डरते कि कहीं वो ग्रीटिंग्स कार्ड का उल्टा -सीधा मतलब निकाल कर भरी सभा में उनका पानी न उतार दे. लेकिन, मन के किसी कोने में ये भावना भी दबी रहती थी कि काश! वो इसका उल्टा-सीधा मतलब ही निकाले. इसी चक्कर में तीन-चार दिन गुजर जाते. घबराहट थोड़ी कम हो जाती. फिर, वे इस उम्मीद के साथ हर सुबह स्कूल जाते कि उधर से ग्रीटिंग्स कार्ड का कोई तो जवाब आएगा.

निशिकांत के मोहल्ले में तब एक फोसला ग्रुप भी हुआ करता था. फोसला का मतलब था- '**Frustrated One Sided Lover**'. इस समूह के मेम्बर्स को अपने टूटे हुए दिल की नुमाइश करने में महारत हासिल थी. इस ग्रुप के सदस्य कभी स्कूल की बेंच पर कम्पास की सूई से इश्क के पैगाम लिखते तो कभी पेड़ों के तनों पर अपनी प्रेमिकाओं के नाम उकेरते. ये वो असफल प्रेमी थे जो इश्क में नाकाम होने पर रात-रात भर रोकर तकिये की रुई को अपने आंसुओं से भिंगोते, मौके-बेमौके इमोशनल शेरो-शायरी करते और दूसरों को सलाह देते -'इश्क न करियो, बड़े धोखे हैं इस राह में.'

फोसला ग्रुप के मेम्बर्स में एक बाद कॉमन थी. और, वह यह थी कि इनकी एक बार या कई बार सार्वजनिक तौर पर धुनाई ज़रूर हुई होती थी. इस ग्रुप के लीडर अरुण भईया थे.

निशिकांत के मोहल्ले में रहने वाली शैलजा बेहद गंभीर टाइप की लड़की थी. वह रोज शाम अपने सीने पर दो किताबें और एक कॉपी

दबाये गणित के शिक्षक बनर्जी सर के पास ट्यूशन पढ़ने जाती और किसी से ज्यादा बातचीत किये बिना, चुपचाप नजरें झुकाए वापस घर चली आती. अरुण भईया उसके साथ ही बनर्जी सर के यहाँ ट्यूशन पढ़ते थे. उन्हें शैलजा के चेहरे में मीना कुमारी नजर आती.

एक दिन अरुण भईया ने इश्क के परकोटे पर चढ़ कर शैलजा के दिल के मोहल्ले में छलांग लगा दी. उन्होंने बड़ी हिम्मत करके एक कागज़ की पर्ची पर किसी नामी शायर का एक शेर लिखा, और पर्ची को धीरे से शैलजा की इकलौती कॉपी के पन्नों के बीच सरका दिया.

शेर कुछ इस प्रकार था:

**“भूतल पर दृष्टि टिकाये, तुम्हारा वो निकल जाना,
सच कहो, कहाँ से सीखा है, जख्मों पर नमक लगाना.”**

लेकिन, अगले ही दिन शैलजा की एक सहेली उनके पास आकर उन्हें धमकाते हुए बोली “शैलजा कही है न कि अब अगर फिर कभी आलतू-फ़ालतू बात लिखकर भेजिएगा तो बनर्जी सर को बता देंगे.” सहेली की बात सुनकर अरुण भईया मायूस हो गए. लेकिन, जब उनके किसी दोस्त ने उन्हें दिलासा देते हुए कहा कि लड़की शरीफ है, शर्मा रही होगी और उन्हें एक बार फिर से कोशिश करनी चाहिए तो उन्होंने दुबारा प्रयास करने की ठानी.

इसके बाद, उम्मीद की किरणों से लबरेज अरुण भईया ने अगले ही दिन ट्यूशन के समय बड़ी हिम्मत के साथ सबकी नजरें बचा कर

शैलजा की इकलौती कॉपी के एक खाली पन्ने पर एक शेर लिख दिया:

**“हमारे इजहारे इश्क पे वो न जाने क्यों बेरुखी दिखा रहे हैं,
मेरे इश्क का इम्तिहां ले रहे या अपना सब्र आजमा रहे हैं.”**

लेकिन, शायद अरुण भईया की किस्मत सचमुच खराब चल रही थी. शैलजा के पास यही एक इकलौती कॉपी थी और शैलजा की माँ ने अपने जीजाजी को चिट्ठी लिखने के लिए उसी कॉपी से एक पन्ना फाड़ा. इत्तेफाक से अरुण भईया द्वारा लिखा हुआ शेर उसी पन्ने के पिछले भाग में था, जिसे संजोग से शैलजा की अम्मा ने देखा नहीं. इसके बाद, शैलजा की अम्मा ने उसी पन्ने पर अपने जीजाजी को एक चिट्ठी लिखकर उसे एक लिफाफे में डाल कर, शैलजा के बाबूजी को पोस्ट करने के लिए दे दिया.

इधर संदेह की पुरुषोचित प्रवृत्ति से अभिभूत शैलजा के बाबूजी ने जैसे ही ब्लेड की मदद से लिफाफा खोल कर उस चिट्ठी को पढ़ा तो उनके होश उड़ गए.

वे शैलजा की माँ को गाली देते हुए लाठी लेकर दौड़े.

उनका आक्रामक रूप देख शैलजा की माँ घबरा कर अपनी सास के कमरे में घुस गई और अन्दर से दरवाजा बंद कर कुण्डी लगा कर रोते हुए बोली, ‘अरे हम सिर्फ तीन रुपईया आपका कुरता से निकाले हैं. हम लौटा देंगे.”

फिर करुण स्वर में बोली, “तीन रूपईया के लिए हमारा जान ले लीजियेगा का ?”

इधर शैलजा के बाबूजी गरजे, “अरे रं**, भाड़ में जाए तेरा तीन रुपया, हमको तो पहले से ही तेरे पर शक था कि तेरा अपने जीजा से शादी के पहले से ही चक्कर चल रहा है. आज कनफरम हो गया.”

इधर अपने चरित्र पर लांछन लगते देख शैलजा की माँ रणचंडी का रूप धारण कर कमरे से बाहर निकल आई और अपनी साड़ी के पल्लू को कमर में खोंसती हुई चिल्ला कर बोली, “का कहे?..... एक बार और कहिये तो.....???

इधर गुस्से से भरे शैलजा के बाबूजी लाठी भांजते हुए बोले, ‘अपने जिजवा को लभ लेटर लिखती हो.....और हमसे बकैती करती हो..... आज हम पहले तोरा जान मारेंगे और फिर, रात का टाटा-पटना ट्रेन पकड़ कर पटना के पहलेजा घाट पर तेरे जीजवा का भी गर्दन काटेंगे”

पति की बात सुनकर शैलजा की माँ असमंजस से बोली, “लभ लेटर? कईसन लभ लेटर जी?..... अरे... हम तो अपने जीजाजी को शैलजा के लिए लड़का देखने के लिए चिट्ठी लिखे थे. जरा लेटरवा दिखाईये तो...” जवाब में शैलजा के बाबूजी ने तमतमाते हुए चिट्ठी शैलजा की माँ की तरफ फेंक दी.

शैलजा की माँ ने चिट्ठी उलट-पलट कर देखा फिर गरमाते हुए बोली, “अरे बकलोल मरद, अगर हमार लिखावट एतना सुन्दर होता तो तुमरे जैसन भकचोन्हर से बियाह होता का? ई सब करतूत शैलजवा का है.”

इधर झगड़े के बीच मैं अपना नाम आते देख शैलजा घबरा गई.

अब शैलजा की माँ, शैलजा के बाबूजी के हाथ से लाठी झपटकर शैलजा की तरफ दौड़ी. शैलजा भयभीत होकर पिता के पीछे छिप गई. लेकिन, उसके पिता ने शैलजा की माँ के हाथ से लाठी छीन ली और संयमित होकर बोले, “पूरी बात का पता तो लगाने दो” और, जब पूरी बात सामने आई तो अरुण भईया का नाम सामने आ गया.

इसके बाद, शैलजा की माँ ‘रणचंडी’ का रूप धारण कर अरुण भईया के स्कूल जा धमकी, फिर सारे स्कूल के सामने ही खालिस देशी अंदाज में अरुण भईया की तीन पीढ़ियों का उद्धार कर दिया. उसके बाद अरुण भईया की पहले तो स्कूल में, फिर शैलजा के भाई के द्वारा सड़क पर, और अंत में अपने घर पर भी भरपूर पिटाई हुई. इस घटना के बाद से अरुण भईया मोहल्ले के रजिस्टर्ड फोसला के रूप में विख्यात हो गए.

कदमा हाईस्कूल, जमशेदपुर: 1983

यह दौर-ए-अस्सी था, जब इन्हीं मोहल्लों में फटी पतंगों को भात की लुगदी से चिपका कर आकाश में बाज की तरह उड़ाया जाता था. मांझे इतने कातिल कि अगर जगह पर लग जाएँ तो पतंगें ही नहीं बल्कि जिन्दगी की डोर भी काट दें. इश्क भी इतना गहरा कि डूबे तो डूब ही गए.

निशिकांत जब दसवीं में पहुँचे तो 1983 का साल चल रहा था. यह वही साल था जब मोहल्ले के जवान हो रहे लड़कों की तरह निशिकांत भी लौकी की सूखी हुई डंठल को तोड़ कर सिगरेट पीना सीख रहे थे, और सीख रहे थे इश्क के नए अंदाज!.

वह अंदाज, जिसमें राजेश खन्ना की नजाकत नहीं थी बल्कि अमिताभ बच्चन की दबंगई थी. मतलब- हम जहाँ खड़े होते हैं, लाइन वहीं से शुरू होती है. चौड़ी मोहरी वाली बेलबाटम, चौड़े बकलस वाली बेल्ट, हाथों में स्टील का कड़ा, कान के नीचे तक लहराते हुए लम्बे केश और बड़े कॉलर वाली छींटदार बुशर्ट.

दसवीं तक आते-आते निशिकांत के हाव-भाव बदलने लगे थे. अब बाबूजी की पुरानी पतलून को नीचे से काट कर तरकारी वाले दो झोले बनते और निशिकांत का एक हाफ पैंट भी बनता.....निशिकांत इसी हाफपैंट को पहन अपने बाबूजी की सायकिल के हैंडल में दोनों झोले लटका कर तरकारी खरीदने के बहाने लड़कियों के स्कूल की तरफ निकल पड़ते.

गर्ल्स स्कूल के सामने उनकी गर्दन थोड़ी और अकड़ जाती, सायकिल की स्प्रिंग वाली घंटी बार-बार बजने लगती और निशिकांत चोर नजरों से गर्ल्स स्कूल की गेट की तरफ देखते हुए सायकिल की पैडल पर तेजी से पैर चलाने लगते. अचानक ही एक मशहूर शेर की पंक्तियाँ सजीव हो उठतीं:

“वो देखते हैं ऐसे जो देखते नहीं, जालिम के देखने का अंदाज देखना”

तब निशिकांत के स्कूल से थोड़ी ही दूर पर लड़कियों का एक स्कूल होता था. दोनों स्कूलों की टाइमिंग में आधे घंटे का अंतर था. लड़कियों का स्कूल सवेरे साढ़े नौ बजे लगता और निशिकांत का सवेरे दस बजे.

निशिकांत हर साल, पहली जनवरी के दिन, कदमा वाले हनुमान जी को सवा रुपये के लड्डू चढ़ाते और प्रार्थना करते कि दोनों स्कूलों की टाइमिंग एक हो जाए. लेकिन, लगता है, बाल ब्रह्मचारी हनुमानजी भी लड़कियों के मामले में थोड़े संकोची बन जाते.

निशिकांत, प्रतिदिन सुबह नौ बजे स्कूल के लिए निकल पड़ते और बामुश्किल दस मिनट में तय होने वाले स्कूल के सफर को एक घन्टे में पूरा करते. इस दौरान कभी वह टिस्को क्वार्टर में लगे अमरूद, और आम के पेड़ों पर चांदमारी करते तो कभी सड़कों के किनारे बने पुलिया पर बैठ कर स्कूल जाने वाली लड़कियों को ताकते.

बाद के दिनों में उन्होंने लड़कियों के स्कूल के पास इमली और बेर का खट्टा-मीठा चूरन बेचने वाले घुरण सिंह से दोस्ती कर ली. अब वे रोज घुरण सिंह के चूरन के खोमचे के पास खड़े होकर उससे गप्पें लड़ाते और स्कूल जाने वाली लड़कियों को ताकते. निशिकांत का सबसे पक्का दोस्त सुरेशवा अक्सर इस काम में उनका साथ देता.

गणित के शिक्षक बनर्जी सर की नजर में सुरेशवा एक कम्प्लीट लफंगा था. उन दिनों शिक्षकों के वेतन काफी कम थे. अन्य शिक्षकों की भांति निशिकांत के स्कूल के बनर्जी सर भी अपना खर्चा पूरा

करने के लिए ट्यूशन पढ़ाते. इम्तहान के तीन-चार महीने पहले उनकी ट्यूशन की क्लासेज पूरी तरह भर जातीं.

सुरेशवा इम्तहान से ठीक दो महीने पहले बनर्जी सर के यहाँ गणित की ट्यूशन पकड़ लेता और घर से ट्यूशन की एडवांस फीस लेकर चाट, समोसा और जिलेबी खा जाता. महीने का अंत होते-होते वह ट्यूशन आना बंद कर देता. इसी दौरान इम्तहान हो जाते और मामला खतम हो जाता.

मामला तब दिलचस्प होता था जब अगले इम्तहान के ठीक पहले सुरेशवा फिर से बनर्जी सर के पास ट्यूशन पढ़ने पहुँच जाता. इस बार उसके हाथ में पहले महीने का एडवांस होता. बनर्जी सर भी नोट देख कर पिघल जाते. इस बार दूसरे महीने की ट्यूशन फीस से जिलेबी और समोसे चलते और बनर्जी सर एक बार फिर अपने ही विद्यार्थी से चकमा खा जाते. दिसम्बर के महीने में वार्षिक परीक्षा के अंतिम दिन अगरबत्ती में पटाखे का पत्तीता बांध कर युरिनल में रखने का काम भी सुरेशवा करता और बम फटने के बाद बनर्जी सर की शिकायत पर हेडमास्टर साहेब बगैर किसी जांच-पड़ताल के सुरेशवा की पिटाई शुरू कर देते.

एक दिन निशिकांत के मोहल्ले में खबर फैली कि गुप्ताजी की बड़की बेटी सोना कुमारी का ब्याह तय हो गया है. अगले दिन सुबह-सुबह गुप्ताईन निशिकांत के घर आ धमकीं और फिर बड़े ही मनुहार से निशिकांत की अम्मा से बोली, “देखिए दीदी, सोना हमारी ही नहीं बल्कि आपकी भी बेटी है. गुप्ताजी उसका ब्याह रोप दिए हैं. पटना से बारात आएगी. आप लोगों को ही सब संभालना है.”

बेटी की शादी की बात सुन कर निशिकांत की अम्मा भी थोड़ी भावुक होकर बोली “ई कौनो कहने की बात है? आपकी बेटी एकदम्मे हमारी बेटी जैसन है.”

मौका ताड़ कर गुप्ताईन बोली, “जब तक सोना की बिदाई नहीं हो जाती तब तक निशिकांत का खाना-पीना सब हमरे यहाँ होगा.” निशिकांत की अम्मा ने भी भावुक होते हुए अपनी सहमति दे दी.

निशिकांत भी अगले दिन सुबह-सुबह तैयार होकर कर गुप्ताजी के घर जा पहुंचे.

गुप्ताईन ने जब निशिकांत को घर पर आया हुआ देखा तो उसकी बाँछें खिल गई. वह चिल्ला कर बोली, “रे रूप्पा, देखो निशिकांत आया है. इसको नाश्ता-पानी करवा दो.”

तभी पता नहीं किधर से निशिकांत का सहपाठी सुरेशवा भी वहां पहुँच गया. वह चिल्ला कर बोला, “हमहू हैं चाची, हम भी नाश्ता करेंगे!”

थोड़ी देर में ही रूपा एक कमरे के अन्दर से एक बड़ी थाली में चार लड्डू, चार बेलग्रामी और पाव-भर दालमोठ लेकर आ गई. निशिकांत ने रूपा को देखा तो उसपर अपना इम्प्रेसन बनाने के खयाल से बोले, “इतना कौन खायेगा? हम तो बस एक ठो लड्डू लेंगे. बाकी सब ले जाइए.”

उनकी बात सुनकर सुरेशवा धीरे से गुर्राया, “अरे साले, तोरा न खाए के हऊ त मत खा.... समान काहे लौटा रहा है बे? शादी-बियाह का घर है. जो जब मिल जाये पेट में डाल लेना चाहिए.” वह आगे बोला,

“भाई, अब जल्दी से खा ले, माड़ो का बांस लाने चाकुलिया जाना है.” इसके बाद, जैसे ही रूपा उन्हें नाश्ता देकर पलटी, सुरेशवा ने नाश्ते का सारा सामान अपने पैंट की जेब में भर लिया.

इधर रूपा के जाते ही निशिकांत का गुस्सा फूटा, बोले, “अरे साले, बांस कपार पर लाद कर लाना है का जो तेरे साथ दस आदमी जायेगा? हांडी सिंह का टाटा का चार सौ सात गाड़ी जायेगा?..... तुम गुप्ता चाचा से माल लेकर हांडी सिंह का गाड़ी के साथ निकल लो. तबतक हम इधर आँगन में माड़ो का बांस गाड़ने के लिए गड़ढा खोदते हैं.” जवाब में सुरेशवा ने एक नजर उनकी तरफ और फिर दूसरी नजर रूपा की तरफ डाली और मुस्कराते हुए वहां से निकल गया.

इधर निशिकांत ने जैसे ही शादी के मंडप का गड़ढा खोदना आरम्भ किया, उधर से रूपा आ गई और पूछा, “चाय पीजिएगा क्या?” निशिकांत ने एक बार नजर भर कर रूपा की तरफ देखा फिर धीरे से हँसते हुए बोले, “हाँ, पी लेंगे, इधरे किनारे रख दीजिये”.

“चाय तो मिट्टी का भरुका में है, नीचे रखेंगे तो लुढ़क जाएगा. आप पहले चाय पी लीजिये फिर गड़ढा खोदते रहिएगा,” रूपा ने भी धीरे से मुस्कराते हुए सलाह दिया.

अचानक निशिकांत ने रूपा से एक सवाल कर दिया, “आपको सिलाई-कटाई का काम आता है क्या?” सिलाई-कटाई का जिक्र सुनते ही रूपा घबरा गई. अभी महीना भर पहले ही सोना दीदी की होने वाली सास ने सोना दीदी से यही सवाल किया था. वह घबराये हुए स्वर में बोली, “ई सब काहे पूछ रहे हैं?”

रूपा को घबराई हुई देख कर निशिकांत भी थोड़े असहज गए, किन्तु खुद को संयत करते हुए बोले, “हम सोच रहे थे कि अगर आपको सिलाई-कटाई का काम आता है तो शादी का माड़ो में रंगीन फूल-पत्ती सजाने में आप हमारा हेल्प करेंगी.” उनकी बात सुनकर रूपा ने राहत की साँस लेते हुए कहा, “सौरी, हम तो कुछ और ही समझे थे.” फिर दोनों एक-दूसरे का मंतव्य समझ कर हँस पड़े.

इसके बाद मंडप सजाने के काम में रूपा, निशिकांत का मनोयोग से हाथ बंटाने लगी. शादी के मंडप की सजावट करते-करते दोनों एक दूसरे से काफी खुल गए. अब दोनों के बीच एक दिलचस्प चर्चा शुरू हो गई:

निशिकांत: “बेताब पिक्चर देखी हो क्या?”

रूपा: “बेताब पिक्चर?”

निशिकांत: “अरे वही, जिसका गाना है- जब हम जवान होंगे, जाने कहाँ होंगे..... जाने कहाँ होंगे—तुमको इयाद करेंगे..... तुमको इयाद करेंगे.”

रूपा: “अरे हाँ! जिसमें धरमेंदर का बेटा है न? फिर, वह चर्चा को आगे बढ़ाते हुए बोली, “सन्निया तो एकदम से अपने बाप जैसन लगता है. लेकिन एक बात कहें?, गब्बरवा एकदम कुत्ता आदमी था. शोले फिलिम में जयवा को मार कर दू दू ठो लाइफ बर्बाद कर दिया.”

निशिकांत ने आश्चर्य से पूछा: “दू ठो?”

रूपा: “अरे! जयवा जिन्दा रहता तो जया भादुड़ी से बियाह करता कि नहीं? लेकिन अमिताभ बच्चनवा पढ़ा-लिखा घर का लड़का है, इसीलिए जया भादुड़ी से सचमुच्चे बियाह कर लिया. फिर उसने उलझन भरे भाव के साथ पूछा, “लेकिन बसंती का हुआ होगा? बिरुआ त एकदमे पियक्कड़ था”

निशिकांत: “हमको लगता है, जयवा के मरने के बाद बिरुआ सुधर गया होगा. हमारी अम्मा कहती है, परिवार का बोझ पड़ने पर हर आदमी सुधर जाता है.”

रूपा: “ठीके कहते हैं आप. शायद यही सोच कर हेमा मालिन ने धरमंदर से शादी किया होगा. लेकिन हमारी अम्मा तो कहती है कि पियक्कड़ आदमी का कौनो भरोसा नहीं.”

निशिकांत: “हम तो कसम खाते हैं कि कभी दारू-शराब को हाथ नहीं लगायेंगे”.

उन दिनों, शादी-ब्याह के अवसर पर शाम का सामूहिक भोज आमतौर पर मोहल्ले के अन्दर ही किसी खाली जगह पर या घर की पक्की छत पर आयोजित होता था. यह भोज विशुद्ध रूप से मोहल्ले के लोगों के सहयोग से होने वाला आयोजन होता था. इन कार्यक्रमों में गाँव से आये हुए रिश्तेदार भी सहयोग करते थे, किन्तु ऐसे आयोजनों के अवसर पर निशिकांत और उनके किशोर साथियों की भूमिका भी बेहद अहम् होती थी. उनकी जिम्मेदारी भोज के लिए बाजार से सामान और सब्जियाँ लाने के साथ-साथ अतिथियों को खिलाने-पिलाने की भी होती

थी. तब मोहल्ले के विवाह-कार्यक्रमों की सफलता परस्पर सहयोग पर निर्भर थी. यह बात मोहल्ले के लोगों को एक-दूसरे के साथ सामाजिक रूप से जोड़ती थी. किन्तु, बाद के सालों में मोहल्ले में अतिथियों को खिलाने-पिलाने के लिए भाड़े पर वेटर मंगाए जाने लगे. नब्बे के बाद तो कई लोगों ने शादी-ब्याह के कार्यक्रम, मोहल्ले से हटा कर क्लबों और होटलों में आयोजित करने आरम्भ कर दिए. अब विवाह का स्वरूप सामाजिक न होकर पूर्णतः व्यक्तिगत हो गया और इन कार्यक्रमों में मोहल्ले के लोग भी अतिथियों के रूप में शामिल होकर औपचारिकतायें निभाने लगे.

अब मोहल्ले के विवाह के कार्यक्रम पहले की तुलना में ज्यादा खर्चीले और आडम्बरपूर्ण होने लगे तथा मंत्री, विधायक और शहर के दूसरे प्रभावशाली लोगों को आमंत्रित करने और उनके साथ अपने संबंधों का भोंडा प्रदर्शन करने का माध्यम बन गए.

निशिकांत को बदले हुए माहौल में मोहल्ले की शादी का कार्यक्रम याद है. मोहल्ले के एक बड़े ठीकेदार साहेब की बेटी की शादी टाटा-रांची हाईवे के एक बड़े होटल में हो रही थी. ठीकेदार साहेब होटल के गेट पर वर-पूजा की रस्म निभा रहे थे, तभी किसी ने उनके कान में आकर कहा, “विधायक जी आये हैं, दस मिनट से ज्यादा नहीं रुकेंगे.” यह सुनते ही लड़की के पिता वर-पूजा का कार्यक्रम बीच में ही छोड़कर मंत्रीजी की अगवानी करने के लिए दौड़ पड़े.

खैर, रूपा की सोना दीदी की शादी सन् अस्सी के दशक की शादी थी.

शाम को मोहल्ले की तमाम भाभियाँ अपनी बियहुती बनारसी साड़ी के ऊपर टह-टह, लाल-लाल, चमकऊआ बियहुती चादर ओढ़ कर मांगटिक्का और चन्द्रहार से लदफद होकर, सोना कुमारी की बारात देखने के लिए गुप्ताजी के छत की मुंडेर पर लटक गईं. इधर मोहल्ले की किशोरावस्था की दहलीज पार कर रही लड़कियों ने भी अपनी भाभियों की कॉपी करने में कोई कसर नहीं छोड़ी थी. जिनके घर में बड़ी भाभियाँ थीं, उन्होंने अपनी भाभियों की लिपिस्टिक, क्रीम, पाउडर आदि अपने चेहरों पर पोत लिए थे.

कदमा गणेशपूजा मेले से खरीदे गए नकली सोने के बड़े-बड़े झुमके, नेकलेस और मांगटिक्का आदि का मोहल्ले के शादी-ब्याह के मौकों पर खूब इस्तेमाल होता था.

बारात आने के पहले निशिकांत भी नहा-धो कर अपनी अम्मा के कमरे में गए और टिन डब्बे में से नारियल तेल निकाल उसमें चार चुटकी पौंड्स कंपनी का टेलकम पाउडर मिलाकर अपने चेहरे पर मल लिया. इसके बाद उन्होंने अपने चमड़े के जूते की तरफ नजर डाली. जूते बुरी हालत में थे. उन्हें याद नहीं आया कि इसे खरीदने के बाद से कभी भी इस पर पॉलिश लगवाई हो. वे दौड़ कर बरामदे में गए. ढिबरी में से किरासन तेल निकला, उसमें नारियल तेल मिलाया और फिर जूते को पुराने गमछे से झाड़ कर उसपर नारियल तेल और किरासन तेल का घोल लगा दिया. जूता चमचमा गया. निशिकांत मन ही मन मुस्कराते हुए बारात की अगवानी करने के लिए निकल पड़े.

इधर रूपा भी सजधज कर घूम रही थी. रूपा को देख कर तो वे खुद पर यकीन ही नहीं कर पाए. वे मन्त्रमुग्ध होकर उसे बस देखते ही

रहे. लाल आलता से रंगे हुए पैरों में पायल और ऊँची हील वाली सैंडल. गुलाबी रंग की बेलबाटम और उसके ऊपर कमर तक कुरता. होठों पर लाल-लाल लिपिस्टिक, कानों में कदमा गणेशपूजा मेले से खरीदे हुए बड़े-बड़े झुमके और हाथों में सिंदूरी रंगों के दो-दो बाले. तभी रूपा धीरे से उनके नजदीक आकर बोली, “कैसी लग रहे हैं हम?”

“एकदम्मे परबीन बौबी,” निशिकांत ने सम्मोहित होकर उत्तर दिया. लेकिन, रूपा नाराज होने का अभिनय करती हुई बोली, “हमको परबीन बौबी एकदम्मे पसंद नहीं है. हमको तो हेमा मालिन पसंद है.”

निशिकांत को पहले तो कोई जवाब नहीं सूझा, किन्तु, जल्दी बात को सँभालते हुए बोले, “अरे, पास से तो एकदम हेमा मालिन जैसी लग रही हो, लेकिन दूर से थोड़ी-थोड़ी ‘परबीन बौबी’ जैसी लग थी. लेकिन तुम असल में लग रही हो ‘हेमा मालिन’ जैसी ही.”

वह फिर मजाक करते हुए बोले, “आज अपने बाऊजी को ‘पापा’ मत बोलना, लिपिस्टिक खराब हो जायेगा.”

जवाब में रूपा इठलाते हुए बोली, “हम तो ‘डैडी’ कहेंगे, समझे?” फिर वह मुस्कराते हुए छत पर भाग गई.

इधर निशिकांत भी प्रफुल्लित मुद्रा में भोजन वाले पंडाल की तरफ निकल गए.

रात को जब भोज का समय हुआ तो हमेशा की तरह खाने की टेबल और कुर्सी पर कब्ज़ा करने वालों ने अफरा-तफरी मचा दी. कुर्सियों की संख्या महज सौ थी और खाने वालों की संख्या करीब छः सौ.

निशिकांत और उनकी टीम के लिए यह परीक्षा की घड़ी होती थी। दरअसल, तब शादी-ब्याह के अवसर पर मोहल्ले के चुनिन्दा परिवारों को ही नहीं बल्कि समूचे मोहल्ले को भोज का न्योता दिया जाता था।

अस्सी के दशक में भोज वाली जगह पर इस तरह की अफरा-तफरी एक आम बात थी। एक पंगत को खा कर उठने में लगभग 30 मिनट का समय लगता था। इस दौरान, खाने वालों की कुर्सी के पीछे अगली पांत में बैठने वाले लोग खड़े होकर उनके उठने का इन्तजार करते। जैसे ही कोई खाना खा कर कुर्सी छोड़ता, उसके पीछे खड़ा व्यक्ति उसकी कुर्सी पर कब्ज़ा कर लेता। इसी अफरा-तफरी में कई बार टेबल पर जूठन पड़ा ही रह जाता और उसपर पत्तलें बिछ जातीं।

मोहल्ले की बहू-बेटियों को इस झंझट से मुक्ति दिलाने के लिए अलग से पांत की व्यवस्था होती। लेकिन, वहां भी कमोबेश यही दृश्य होता। शहर में आने के बाद गाँव वाली जात-पांत तेल लेने चली जाती थी। और, जो जात-पांत मानते थे वे रात-भर भूखे पेट कुढ़ते रहते थे, क्योंकि परिवार की महिलायें तो कुर्सी-टेबल पर शहरी भोज का आनंद उठा कर गहरी नींद में सो जाती थीं।

भोज के दौरान कुछ तथाकथित सयाने लोग जूठे पत्तल फेंके जाने वाले स्थल का मुआयना कर आते और खाना परोस रहे लड़कों के कानों में धीरे से कहते, “पत्तल में बहुते खाना जियान हो रहा है। लगता है, कुछ लोग खाना घटवाने की पोलटिक्स कर रहे हैं। संभल कर भोजन चलाना है।”

दूसरी तरफ पंगत में बैठे लोगों की मानसिकता कुछ और ही होती थी. वे एकबार में ही अपने पत्तल में ज्यादा से ज्यादा चीजें भर लेना चाहते थे, इस आशंका में कि पता नहीं कब भोज का सामान घट जाए.

एक बात और थी. अगर एक हजार लोगों को खाने का न्योता दिया गया है तो हलवाई को यह बताया जाता था कि सात सौ लोगों का भोजन बनाना है, जिससे कि हलवाई को कम मजदूरी देनी पड़े. लेकिन, जो समझदार और अनुभवी हलवाई होते थे वे 'सात सौ' का मतलब 'एक हजार' लगाते थे, और उसी के हिसाब से तैयारी कराते थे. किन्तु नये और कम अनुभवी हलवाई अक्सर इस मामले में धोखा खा जाते थे.

हर विवाह के भोज मैनेजमेंट पर पैनी नजर रखने वाले मोहल्ले के दो-चार लोग इसी ताक में रहते कि कब भोज का कोई आइटम घटे और वे इसका ऑल इंडिया रेडियो से मोहल्ले भर में प्रसारण कर दें कि फलाना के भोज में सामान घट गया था और हम तो बिना भोजन किए ही वापस आ गए.

उन दिनों भोज के दौरान रसगुल्लों की कमी का सबसे ज्यादा खतरा बना रहता था. अस्सी के दशक के भोज में रसगुल्ला एक प्रीमियम आइटम था. इसलिए रसगुल्ले की बाल्टी, भोज दल के सबसे अनुभवी सदस्य के हाथ में रहती. भोज में सम्मिलित लोग भी अधिक से अधिक रसगुल्ले खाने की ताक में रहते. एक-एक व्यक्ति तीस-तीस, चालीस-चालीस रसगुल्ले खा जाता और मेजबान का बजट बिगाड़ देता. कई बार तो हालात ऐसे हो जाते कि मोहल्लेवाले सारा कुछ खा-

पी कर खतम कर देते और बारात के खाने के लिए कुछ भी नहीं बचता था. उसके बाद, बारात के रूठने-मनाने का सिलसिला रात भर चलता.

जमशेदपुर के भोज कई मामलों में बिहार के परम्परागत भोज से अलग थे. जमशेदपुर के वैवाहिक आयोजनों में पूड़ी, पुलाव, आलू-पटल, मटर-पनीर, आलू-गोभी, अमावट या खजूर की चटनी, दहीबड़े आदि बनते. दिलचस्प रूप से सामूहिक भोजों में हरी सब्जियाँ जैसे; भिन्डी, साग, बैंगन, कद्दू, कोहड़ा आदि का इस्तेमाल नहीं होता था. यह जमशेदपुर के बहुसांस्कृतिक समाज के पारस्परिक सामंजस्य और पसंद-नापसंद के अनुरूप विकसित, शहर के विशेष भोजन-संस्कृति का हिस्सा था, जो कमोबेश शहर के बिहारी और गैर- बिहारी पृष्ठभूमि के लोगों के मध्य स्वीकृत भी हो गया था.

इधर रूपा की दीदी की शादी में एक हफ्ते स्कूल से नदारद रहने के बाद निशिकांत जब वापस स्कूल पहुँचे तो पाया कि गणित के शिक्षक बनर्जी सर, इतिहास के शिक्षक श्रीवास्तव सर की अनुपस्थिति में रूस की क्रांति पढ़ा रहे हैं. इतिहास पढ़ाते-पढ़ाते बनर्जी सर अचानक इमोशनल होकर कहने लगे, “साला इण्डिया का पब्लिक अजगर साँप का माफिक है. देखने में इतना बड़ा, लेकिन बहुत लेजी और डरपोक. जितना स्पेस कम करो उसी में एडजस्ट कर लेगा. कितना भी अत्याचार करो, हँसते-हँसते बर्दास्त कर लेगा. इंडिया का पब्लिक, रात-दिन क्रांति का बात करेगा, लेकिन एन टाइम पर पुलिस फ़ोर्स को देखते ही बच्चा को स्कूल से लाने का बहाना करके स्पाॅट पर से

खिसक जायेगा और पुलिस साला लाठी मार के नेता का पीठ लाल कर देगा. इंडिया में साला कभी क्रांति नहीं हो सकता. नेता साला चिल्लाते चिल्लाते मर जाएगा, कोई नहीं निकलेगा घर से.....”

उसी दौरान हेडमास्टर साहेब निशिकांत की क्लास के बगल से गुजर रहे थे, उनके कानों में जब ‘क्रांति’ शब्द पड़ा तो वे रुक गए और निशिकांत की क्लास में घुसते हुए बनर्जी सर से बोले, “मनोज कुमार की ‘क्रांति फिल्म’ अकेले ही जा कर देख लिए क्या? जमशेदपुर टॉकीज और करीम टॉकीज में लगा है न? टिकट तो ब्लैक में ही लिए होंगे?”

जवाब में बनर्जी सर बोले, “अरे सर, हम मनोज कुमार का ‘क्रांति पिकचर’ का नहीं बल्कि ‘रूस का क्रांति’ का बात कर रहा है. हम बच्चा लोग को बोला कि इण्डिया में रूस जैसा क्रांति नहीं हो सकता, क्योंकि इण्डिया का पब्लिक डरपोक है.”

हेडमास्टर साहेब उनका प्रतिरोध करते हुए बोले, “कौन बोलता है कि इंडिया में क्रांति नहीं होता. जो दो हजार साल में नहीं हुआ वो पचास साल में हुआ है. पचास साल पहले जिन लोगों को हमारे बाप-दादा गाँव के तालाब से पानी नहीं लेने देते थे, मंदिर में घुसने नहीं देते थे, आज हमलोग उनके साथ टीचर-रूम में बैठकर अपना टिफिन शेयर करते हैं.” वे फिर बोले, “बनर्जी बाबू आप भी तो कभी-कभी सन्डे इवनिंग में चंद्रशेखरन सर के साथ उनके घर में बैठ के फ्राईड चिकेन-कलेजी के साथ रंगीन पानी पीते हैं.” वे आगे बोले, “इंडिया बदल रहा है बनर्जी बाबू. हजार साल का बीमारी है, ठीक होने में टाइम लगेगा.

ई मन का रोग है. तन का नहीं कि एक दिन में औपरेशन करके ठीक कर दिया.”

किन्तु, बनर्जी सर भी चुप रहने के मूड में नहीं थे. उन्होंने हेडमास्टर साहेब से एक अप्रत्याशित सा सवाल किया, “क्या आप अपना बेटी का शादी अपने से छोटा जात में करेंगे?” बनर्जी सर का सवाल सुनकर हेडमास्टर साहेब तो एक पल के लिए हतप्रभ रह गए. आज क्लास के सत्तर छात्र-छात्राओं के सामने उनकी परीक्षा की घड़ी थी. वे बहुत संभल कर बोले, “देखिये ई फैसला हमारी बेटी का होगा कि वह किससे ब्याह करे. अगर वह अन्तर्जातीय ब्याह करेगी तो हम बाधक नहीं बनेंगे. लेकिन किसी के कहने पर समाजसेवी कहलाने लिए बेटी की मर्जी के खिलाफ दूसरे जात में उसका ब्याह भी नहीं करेंगे. आखिर उसकी जिन्दगी है, फैसला वह खुद करे. हर काम में लड़की को ही बलि का बकरा बनाना जरूरी है क्या?” उधर दोनों शिक्षक समाज-सुधार के मुद्दे पर अपने-अपने सर लड़ा रहे थे, इधर सुरेशवा और निशिकांत एक अलग प्रकार की चर्चा में मशगुल थे.

सुरेशवा मज़ाकिया लहज़े में निशिकांत को छेड़ रहा था, “क्या बे, तेरी रूपा मैडम तेरे को ‘फलाइंग किस’ देती है कि नहीं?” निशिकांत ने शेखी बघारते हुए उत्तर दिया, “देती है बे. सबसे मजा तो तब आता है जब ऊ अपने लिपिस्टिक से लालियाये हुए दुन्नो ओठ को आपस में जोर से सटा कर पुच्च का आवाज निकालती है.”

सुरेशवा उनका मजाक उड़ाते हुए बोला, “अबे अइसने आवाज तो हमारी बड़की मौसी भी निकालती है. लेकिन ऊ फलाइंग किस नहीं

देती है बे. ऊ तो बड़का मौसा का चुनौटी से खैनी चुरा कर मुँह में दबाये रखती है और समूचे घर में पुच्च-पुच्च करते रहती है. बेटा, पता लगाओ, कहीं तेरी रूपा भी गुप्ता चाचा का खैनी का डिबिया सफाचट तो नहीं कर रही है?”

इसके बाद सुरेशवा गंभीर स्वर में बोला, “अबे गऊ पंडित, रूपा को फिलिम-ओलिम दिखा, उसको जुबली पार्क घुमा. शाकाहारी प्रेम करके क्या बोड़आम में कटहल का अचार डालेगा?”

“देख भाई, ये काम मेरे बस का नहीं है. छत पर खड़ा होकर रूपा को मटकी मारना अलग बात है, लेकिन उसको लेकर शहर में घूमना-फिरना बिलहूले अलग बात है”, निशिकांत ने उत्तर दिया.

अब सुरेशवा निशिकांत को हिम्मत दिलाता हुआ बोला, “बिना रिस्क के इस्क का मजा नहीं! अबे, एक बार तो उसको फिलिम दिखा कर देख. बहुत मजा आएगा.” फिर, वह निशिकांत को डराता हुआ बोला, “बेटा, अगर तुम उसको फिलिम दिखाने नहीं ले गए तो कोई और ले जायेगा. फिर, तेरा पत्ता साफ़.”

निशिकांत ने आशंका प्रकट की, “लड़की है यार, वह नहीं जाएगी. उसमें इतनी हिम्मत नहीं है.”

जवाब में सुरेशवा बोला, “बेटा, अब ऊ साधारण लड़की नहीं है, बल्कि इस्कियाई हुई लड़की है. उसमें तुमसे दस गुना ज्यादा हिम्मत है. अगर थोड़ा कोशिश करोगे तो तुम्हारे साथ घर से भाग भी जायेगी.

वह आगे बोला “ई उमर में कोई लड़की परिवार बसाने के लिए इसक नहीं करती है रे गऊ पंडित.”

निशिकांत आश्चर्य से बोले, “ऐसा!”

जवाब में सुरेशवा आँखें तरेरते हुए बोला, “हाँ ऐसा!?”

अगले दिन जब रूपा घुरण सिंह के खोमचे पर चूरन खरीदने के बहाने निशिकांत से मिलने आई तो निशिकांत ने उससे धीरे से पूछा, “हमारे साथ सिनेमा देखने चलोगी क्या? नटराज टॉकीज में ‘जितेंदर’ और ‘सीरी देवी’ का ‘हिम्मतवाला’ पिकचर लगा है.”

रूपा इस तरह के सवाल के लिए तैयार नहीं थी. वह अनिश्चय भरे भाव से बोली, “हमरी अम्मा को पता लगेगा तो नरेटी टीप देगी.”

निशिकांत उसकी हिम्मत बढ़ाते हुए बोले, “कैसे पता चलेगा? तुम साढ़े दस बजे घर से निकलना. उसके बाद ग्यारह से दो बजे वाले नून शो में हमलोग फिलिम देखेंगे. फिर टाइम पास करने के लिए जुबली पार्क में इधर-उधर टहलाई करेंगे और फिर चार बजे तक स्कूल वापस आ जायेंगे.”

निशिकांत की उम्मीद के उलट रूपा फिल्म देखने के थ्रिल को रोक नहीं पाई और बोली, “ठीक है. हम कल साढ़े दस बजे तुमसे यहीं पर मिलेंगे.”

निशिकांत को हतप्रभ छोड़ उधर रूपा जैसे ही स्कूल जाने के लिए वापस मुड़ी, सुरेशवा तेजी से भागता हुआ निशिकांत के पास आ गया और आते ही बोला, 'क्या बे, मामला फिट हो गया न?' निशिकांत आस्तीन से अपने चेहरे का पसीना पोंछते हुए नर्वस हो कर बोले, "अबे, लेकिन इसको सिनेमा हॉल लेकर जायेंगे कैसे? फर्स्ट टाइम है यार, रूपा को सिटी बस में खड़ा करके तो ले नहीं जायेंगे. फुल टेम्पू का 10 रुपया भाड़ा लगेगा, और मेरा सायकिल का पीछे वाला कैरियर पर तो वो बैठ कर जाएगी नहीं."

सुरेशवा बोला, "अबे, चिंता मत कर. सब सेटिंग हो जायेगा. हम अपना चाचा का लूना मोपेड लेते आयेंगे. लेकिन तू बेटा, उसमें पांच रुपया का पेट्रोल जरूर भरवा लेना."

वह आगे बोला, "हम सुबह में नटराज टॉकीज जाकर तुम लोग के लिए डीसी का दो ठो किनारे वाला सीट का टिकट कटवा देंगे. फिलिम ग्यारह बजे शुरू होगा, लेकिन तुमलोग वहां पर दस मिनट लेट से आना. तब तक भीड़ हाल में घुस जायेगी. हाल में टाईट बंद रहेगा, तुम लोग को कोई पहचानेगा नहीं. इसी तरह फिलिम खतम होने के दस मिनट पहले तुमलोग सिनेमाहाल से बाहर निकल जाना. कोई रिस्क नहीं रहेगा. समझे?"

जवाब में निशिकांत ने सहमति में अपना सर हिलाया. अगले दिन प्लान के मुताबिक लगभग सवा ग्यारह बजे निशिकांत रूपा को लूना मोपेड की पिछली सीट पर बैठा कर नटराज सिनेमा के गेट पर पहुंचे

तो देखा सुरेशवा उनका पहले से इन्तजार कर रहा था. रूपा सुरेशवा को वहां देखकर घबरा गई और अपना मुँह दूसरी तरफ कर लिया.

उसको घबराया हुआ देख कर निशिकांत उसे आश्वस्त करते हुए बोले, “जिगरी दोस्त है मेरा, हमलोग का बारे में सब पता है. कोई से कुछो नहीं कहेगा.” रूपा आश्वस्त होकर वापस मुड़ी और निशिकांत के साथ सिनेमाहाल में घुस गई.

इधर जब इंटरवल हुआ तो सुरेशवा चिनियाबादाम लेकर हाजिर हो गया और बोला, “हम भी टिकट कटा लिए थे, दोस्त का बड़ीगार्ड बनने के लिए.” उत्तर में निशिकांत ने बड़ी ही कृतज्ञता के साथ अपने जिगरी दोस्त की तरफ देखा.

इधर रूपा चिनियाबादाम फोड़ते हुए, फिल्म देखने में मशगुल हो गई. उसे फिल्म के फर्स्ट हाफ की तरह ही सेकंड हाफ में भी खयाल ही नहीं रहा कि उसके साथ निशिकांत भी बैठे हैं. फिल्म खतम होने में जब दस मिनट के आस-पास का समय बाकी रह गया तो निशिकांत ने रूपा का हाथ पकड़ते हुए कहा, “चलो अब बाहर निकलना है.” बदले में रूपा ने बच्चों की तरह हाथ छुड़ाते हुए कहा, “फिलिम का एंड देखे बिना हम थोड़े जायेंगे.”

अब निशिकांत मनुहार करते हुए बोले, “चल मेरी अम्मा, अगर हाल की लाईट जल गई तो सब गुड-गोबर हो जाएगा. मोहल्ले का कोई आदमी अगर हमलोग को यहाँ स्कूल ड्रेस में देख लेगा तो उसके बाद हमदोनों की घर में भुरकुस पिटाई होगी.”

लेकिन, फिल्मों की दीवानी रूपा कहाँ मानने वाली थी, जब तक फिल्म खत्म नहीं हुई तब तक वह अपनी सीट पर बैठी रही. फिल्म खत्म होने के बाद जैसे ही हाल की लाईट जली, सिनेमाहाल में मौजूद लोग बाहर निकलने लगे. ठीक उसी समय सुरेशवा भीड़ को चीरता हुआ किसी तरह उनके पास आया और बोला, “अभी बैठे रहो, पहले सबको निकल जाने दो. हम लोग थोड़ी देर बाद निकलेंगे.”

थोड़ी देर बाद जब तीनों सिनेमाहाल के पिछले गेट से बाहर निकले तो भीड़ जा चुकी थी. बाहर का मौसम बेहद सुहाना हो गया था, लगता था जैसे थोड़ी देर पहले जम कर बारिश हुई हो.

बाहर का मौसम देख कर रूपा निशिकांत का हाथ पकड़ कर रोमांटिक स्वर में बोली, “आज हमको तो नाचे का मन कर रहा है.”

जवाब में निशिकांत धीरे से सुरेशवा से बोले, “अबे, हमको तो रोने का मन कर रहा है”

“क्या हो गया?..... सिनेमाहाल में रूपा तुमको एक दो तमाचा लगा दी थी क्या?” सुरेशवा ने मजाक किया.

“नहीं बे, हमको डर है कि एतना बारिश में कहीं तेरे चाचा का पुराना लूना मोपेड का कारबोरेटर में पानी चला गया होगा तो मोपेडवा स्टार्ट भी नहीं होगा,” निशिकांत ने आशंका जताई. किन्तु, सुरेशवा उनको हिम्मत बंधाते हुए बोला, “चल ना बे, हम हैं ना, ‘लूना’ क्या उसका बाप भी स्टार्ट होगा.”

इसके बाद सुरेशवा ने लूना मोपेड की सीट पर चढ़ कर सायकिल की तरह चार-पांच बार जोरदार पैडल मारी तो लूना स्टार्ट हो गई. फिर, प्लान के मुताबिक सुरेशवा को वहीं छोड़ कर दोनों जीव जुबली पार्क पहुंचे.

तीन बजे के आस-पास जुबली पार्क में भीड़ कम थी. सिर्फ कुछ मजदूर घास काटने का काम कर रहे थे. दोनों कुछ देर तक जुबली पार्क में पेड़ों के बीच इधर-उधर घूमते रहे.

दोपहर के तीन बज रहे थे. रूपा को अब तेज भूख लग रही थी, और उसे याद आ रही थी अपने गाँव से बोरे में भर कर आये उसना चावल का भात, आम का अचार और घर की छत पर फले ताजे-ताजे कद्दू की तरकारी. इधर निशिकांत को भी भूख लग रही थी, लेकिन वह रूपा के सामने अपने झोले से अम्मा की दी हुई रोटी और आलू की भुजिया वाली अपनी टिफिन निकालने में झिझक रहे थे.

ठीक उसी समय एक झालमूढ़ी वाला उनके पास से गुजरा. उसके डब्बे के ऊपर रखे आलू और प्याज के टुकड़ों को देख कर दोनों की भूख कई गुना और बढ़ गई. निशिकांत ने रूपा से पूछा, “झालमूढ़ी खाना है क्या?” भूख से बेहाल रूपा ने ‘हाँ’ की मुद्रा में अपना सर हिला दिया.

निशिकांत ने झालमूढ़ी वाले को पास बुला कर दो व्यक्तियों के लिए झालमूढ़ी बनाने को कहा. इधर, झालमूढ़ी वाला चुपचाप अपने डब्बे में

झालमूढ़ी बना रहा था और उधर, रूपा और निशिकांत जुबली पार्क के पेड़ों के पीछे छिप कर बैठे प्रेमी-जोड़ों को देख-देख रोमांचित हो रहे थे.

अचानक निशिकांत ने रूपा को छेड़ने वाले अंदाज में उससे एक सवाल किया, “ई लड़का-लड़की सब पेड़ के पीछे छिप कर क्या करता होगा?”

रूपा उनकी बात का कुछ जवाब दे, इसके पहले ही झालमूढ़ी वाला बोला, “अरे करते क्या हैं? लड़कीयन सब लड़कवन सब का मुंडी अपना गोदी में रख कर उसका बाल में से जूं निकलता है. हम लोग तो औंजा गए हैं ई सब का नौटंकी देख-देख कर! शुरू में जब आते हैं तो लड़कवन सब जादा बोलता है, बाद में लड़कीयन सब जादा बोले लगती है. फिर, चार-पांच महिन्ना होते-होते, दुन्नो बोलते हैं और पब्लिक सुनता है.”

झालमूढ़ी वाले की बात पर मुस्कराते हुए निशिकांत ने झालमूढ़ी से भरे दोनों ठोंगे अपने हाथों में ले लिए और जेब में हाथ डालते हुए झालमूढ़ी वाले रोब से पूछा, “केतना पैसा हुआ हो?”

झालमूढ़ी वाला भावहीन स्वर में बोला, “चार रूपईया!”

निशिकांत ने आश्चर्य से सवाल किया, “चार रूपईया?”

अब, झालमूढ़ी वाला ढीठता से बोला, “हाँ, “चार रूपईया!”

“साला, कमीना, साथ में लड़की देख कर ब्लैकमेल कर रहा है. इसको बिना मारे छोड़ेंगे नहीं. कल सुरेशवा और अपने दूसरे मरखाह दोस्त

मनोरंजन मिश्रा के साथ जुबली पार्क जरूर आयेंगे, तब इस साले की दमतक धुनाई करेंगे,” निशिकांत ने गुस्सा पीते हुए सोचा. फिर, उन्होंने अपने बुशर्ट की जेब में हाथ डाला. उनकी उँगलियों से पांच रुपये के छोटे-बड़े सिक्के टकराए. उन्होंने चार रुपये के सिक्के गिनकर झालमूढ़ी वाले को सौंप दिए.

झालमूढ़ी खाते-खाते लगभग साढ़े-तीन बज गए थे. दोनों वापस आने के लिए टाटा साहेब की मूर्ति के पास रखी लूना मोपेड के पास पहुँचे. सौभाग्य से इसबार लूना मोपेड आसानी से स्टार्ट हो गई. इसके बाद मोपेड पर बैठ कर दोनों पार्क से बाहर निकल गए. किन्तु, अभी वे थोड़ी ही दूर गए होंगे कि लूना मोपेड भुड़भुड़ाते हुए अचानक बंद हो गई. हैरान-परेशान निशिकांत ने लूना मोपेड की सीट पर बैठ कर पचासों बार पैडल मारी, किन्तु मोपेड दुबारा स्टार्ट नहीं हुई.

अचानक निशिकांत का कलेजा धक् से रह गया. दरअसल, पसीने से तर-बतर निशिकांत को अचानक ही सुरेशवा की वह हिदायत याद आ गई थी, जिसमें उसने जोर देकर कहा था कि भाई मोपेड में पांच रुपये की पेट्रोल जरूर डलवा लेना! सामने धातकीडीह पेट्रोल पम्प था, लेकिन, उनकी जेब में मात्र एक रुपये का एक सिक्का बचा था. लूना के पीछे रूपा बेहद नर्वस भाव के साथ खड़ी थी. निशिकांत का मन फूट-फूट कर रोने का करने लगा.

थोड़ी देर बाद साकची-धातकीडीह-कदमा स्ट्रेटमाइल रोड पर कुछ लोगों ने बेहद दिलचस्प नजारा देखा. निशिकांत, सुरेशवा के चाचा की बिना पेट्रोल वाली लूना मोपेड की हैंडिल को पकड़ कर आगे की तरफ ठेल

रहे थे और उनके पीछे-पीछे रूपा, स्कूल ड्रेस पहने, पीठ पर खाकी रंग का बस्ता लटकाए, धीरे-धीरे चल रही थी.

अगले दिन निशिकांत ने रूपा को खुश करने के गरज से बस अड्डों पर मिलने वाली जीजा-साली टाइपवाली शायरी की किताब से एक शेर मारा और उसे अपने प्रेमपत्र में चस्पा कर दिया:

*“चांदनी चाँद से होती है, सितारों से नहीं,
मुहब्बत एक से होती है, हजारों से नहीं.”*

एक कॉपी में रख कर रूपा को प्रेम-पत्र देते समय उसे खुश करने के ख्याल से उन्होंने रूपा के कान में धीरे से कहा, “शायरिया रात-भर सोच-सोच कर खुदे लिखे हैं. तुमको बहुते अच्छा लगेगा.”

ठीक एक दिन बाद रूपा ने भी मुस्कराते हुए उनके प्रेम-पत्र का जवाब कॉपी में भर कर ठीक उन्ही के अंदाज में दिया और कहना नहीं भूली कि शायरिया रात-भर जागकर तुम्हारे लिए खुदे लिखे हैं. तुमको बहुते अच्छा लगेगा.

शेर कुछ यूँ था:

*“हमें प्यार है तुम्ही से, मेरी जाने जिन्दगानी,
तेरे पास मेरा दिल है, मेरे प्यार की निशानी.”*

अगले दिन जब निशिकांत रूपा से मिले तो मिलते ही बोले, “सिनेमा का गाना लिख कर बोलती हो कि रात-भर जाग कर हम खुद लिखे हैं?”

निशिकांत की बात सुनकर रूपा को भी गुस्सा आ गया. वह चिढ़ते हुए बोली, “जैसे तुम्हारा तो शायरिया ओरिजिनले था? हमारी छोटकी भाभी कह रही थी कि थर्ड-क्लास किताब से मारा हुआ घटिया शायरी है”. फिर वह निशिकांत को चिढ़ाते हुए बोली, “बड़े आये मिसरा ग़ालिब!!”

अपना मजाक उड़ते देख निशिकांत पुरुषोचित दंभ से भर गए और बोले, “अरे बकलोल, ‘मिसरा ग़ालिब’ नहीं, बल्कि ‘मिर्चा ग़ालिब’. समझी?”

उनकी बात सुनकर रूपा गुस्से से अपना पैर पटकती हुई वहां से चली गई.

अगले दिन जब निशिकांत ने इस घटना का जिक्र सुरेशवा से किया तो वो बोला, “सुनकर दुखी मत होना भाई! आजकल रूपा के घर उसकी सोना दीदी का देवर आया हुआ है. दुन्नो छत पर बैठ कर दिन-भर न जाने क्या-क्या गपियाते रहते हैं.” वह आगे बोला, “हमको तो लगता है कि तुम्हारी रूपा उससे लटपटा गई है. वैसे भी जवान लड़की लौकी की लत्तर की तरह होती है, और अझुराने के लिए अगले-बगल कौनो मजबूत बांस-टहनी खोजती फिरती है. इसमें बदनामी का रिस्क कम रहता है और उसका काम भी हो जाता है.”

इसी बीच स्कूल में एक दिलचस्प घटना घट गई. एक दिन बनर्जी सर दसवीं में पढ़ा रहे थे. उन्होंने बच्चों को पढ़ाई के प्रति प्रोत्साहित करने

के ख्याल से कक्षा में दुष्यंत कुमार का एक शेर तोड़-मतोड़ कर अपने अंदाज में सुनाया. टूटा-फूटा शेर कुछ इस प्रकार था:

*“कौन बोलता है आकाश में छेदा नहीं हो सकता,
एक पत्थर जरा जोर लगा के तो उछालो यारों.”*

‘गालिब’ वाली घटना अभी दो दिन पहले ही घटी थी. सुरेशवा की जबान पर अभी भी ‘गालिब’ का नाम चढ़ा हुआ था. सुरेशवा, बनर्जी सर का शेर सुनकर वह जोश से भर उठा और जोर-जोर से ताली पीटते हुए बोला, “अरे बनर्जी सर, आप तो एकदम ‘मिर्चा गालिब’ जैसा शायरी बोलते हैं!”

बनर्जी सर सुरेशवा के मुँह से अपनी तारीफ़ सुनकर गदगद हो गए और मुस्कराते हुए क्लास से निकलकर प्रिंसिपल-रूम की तरफ बढ़ गए. वहां पहुँचकर बांग्ला टोन में उन्होंने हेडमास्टर साहेब से कहा, “सोरेश रेश आज हामको ‘गालिब’ बोला.” इधर हेडमास्टर साहेब का मूड पहले से ही किसी वजह से उखड़ा हुआ था. उन्होंने बनर्जी सर को कोई जवाब नहीं दिया और दनदनाते हुए निशिकांत के क्लास में पहुँच गए और बिना कुछ कहे, सुरेशवा को पटक कर लतियाने लगे.

दो-तीन लात खाने के बाद सुरेशवा उनकी पकड़ से निकल कर कुत्ते के बच्चे की तरह कैं.... कैं..... करता हुआ क्लास से बाहर भागा. इधर हेडमास्टर साहेब गुस्से से बिफरते हुए कक्षा में चीखे, “ई चोट्टा पहले स्टूडेंट सब को गाली देता था, लेकिन अब इसका हिम्मत इतना बढ़ गया है कि टीचर लोग के साथ भी गालीगलौज करता है.”

इसके बाद हेडमास्टर साहेब हाथ झाड़ते हुए टीचर्स-रूम में वापस लौटे और बनर्जी सर को संबोधित करते हुए बोले, "आज सुरेशवा को मन-भर लतियाये हैं , लेकिन लगता है, इसी चक्कर में मेरा दाये पैर अंगूठा मुचक गया है. गुस्सा मैं एक-दो लात बेंच पर भी लग गया था".

इसी बीच पिकूलाल हेडमास्टर साहेब की टूटी हुई घड़ी लेकर स्टाफ-रूम में दाखिल हुआ और उसे हेडमास्टर साहेब को थमाते हुए धीरे से बोला बोला, "सर, जब आप सुरेश को पीट रहे थे न, तभी यह टूट कर नीचे गिर गया था. हमने चुपचाप इसको उठा कर रख लिया था." हेडमास्टर साहेब ने अपनी पत्नी के विकराल रूप का स्मरण करते हुए जल्दी से अपनी ससुराल वाली घड़ी को उलट-पुलट कर देखा और राहत की सांस लेते हुए पिकूलाल से बोले, "शाबास पिकूलाल! तुमने बहुत ही समझदारी और ईमानदारी का परिचय दिया है. हम तुमको गणतंत्र दिवस पर पुरस्कार देंगे." उनकी बात सुनकर पिकूलाल चहकता हुआ वापस क्लास की ओर वापस दौड़ पड़ा. इधर बनर्जी सर ने जिज्ञासावश हेडमास्टर साहेब से सवाल किया, "सोरेश फिर कोई बोदमाशी किया था क्या?"

उत्तर में हेडमास्टर साहेब झल्लाते हुए बोले, "अरे बनर्जी सर, आप ही ने तो कहा था कि सुरेशवा ने आपको गाली बोला है." अब, बनर्जी सर चौकते हुए बोले, "लेकिन सर, हम आपको कब बोला था कि सोरेश हमको गाली बोला. हम क्लास टेन को दुसंत कुमार एक शायरी सुनाया था न, इसी का वास्ते सोरेश हमको 'गालिब' बोला था"

उनकी बात सुनकर हेडमास्टर साहेब झंपते हुए बोले, “सुरेशवा बेकार में ही पिट गया. हमसे भारी मिस्टेक हो गया.” फिर अचानक हेडमास्टर साहेब का मूड और खराब हो गया और बनर्जी सर पर भड़कते हुए बोले, “बनर्जी सर, आप भी क्लास में शेर-शायरी थोड़ा कम किया कीजिये, इससे बच्चे बिगड़ जाते हैं.”

हेडमास्टर साहेब का रुख देखकर बनर्जी सर ने अब वहां से खिसकने में ही अपनी भलाई समझी.

उधर, अगले दिन जब सुरेशवा स्कूल आया तो उसका मूड बिगड़ा हुआ था. दोपहर में जब टिफिन हुई तो क्लास के लगभग सभी लड़के अपना-अपना लंच-बॉक्स लेकर स्कूल के मैदान में एक पेड़ के नीचे चले गए. सुरेशवा भी अपना झोला लेकर उसी पेड़ के नीचे आ गया.

सभी लड़के पेड़ के नीचे बैठ कर अपना-अपना लंच-बॉक्स खोल कर खाना खाने लगे. तभी सुरेशवा ने अपने झोले में से एक पिस्तौल निकाली और उसे हाथ में लेकर लहराता हुआ जोर से बोला, “ई पिस्तौल है. अगर चल जाये तो खून बाद में निकलता है, जान पहले निकलता है.” उसकी बात सुनकर सारे लड़के टिफिन खाना भूल कर डर और हैरत मिश्रित भाव से पिस्तौल की तरफ देखने लगे.

फिर, अचानक सुरेशवा निशिकांत की तरफ पिस्तौल चमकाते हुए बोला, “चल बे पंडित, शौचालय के पीछे इसको टेस्ट किया जायेगा.

फिर वह सबको सुनाता हुआ बोला, “इसका एक गोली पर स्कूल का एक ठो मास्टर का नाम लिखा हुआ है.”

सुरेशवा के हाथ में पिस्तौल देख कर निशिकांत की हालत तो पहले ही खराब हो गई थी, टेस्ट की बात पर वह घबराते हुए धीरे से बोले, “भाई, हमको बहुत जोर का पेसाब लगा है. तुम चलो, हम पीछे से आते हैं .”

उनकी बात सुनकर सुरेशवा गुस्से से बोला, “अबे पंडित, ज्यादा सियाना मत बन, चल वहीं पर पेसाब कर लेना.” अब, निशिकांत की हिम्मत नहीं हुई कि सुरेशवा से दुबारा कुछ कहें. वह चुपचाप किसी हलाल होने वाले बकरे की तरह सुरेशवा के पीछे-पीछे चल पड़े. वे मन ही मन उस दिन को कोस रहे थे, जब उन्होंने इस कमीने से दोस्ती की थी.

जब दोनों शौचालय के पीछे पहुँच गए तब सुरेशवा हँसते हुए बोला, “पिस्तौल का टेस्ट क्या करेंगे..... घंटा? गोली तो है ही नहीं.” फिर, उसने अपनी जेब से सुतली वाला पटाखा निकला और निशिकांत की तरफ देखते हुए बोला, “चल बे पंडित, माचिस निकाल”.

निशिकांत ने सवाल किया, “मेरे पास माचिस कहाँ है बे?”.

सुरेशवा हँसते हुए बोला, “चल निकाल! सब पता है. साले, अगर पाकिट चेक करवाएगा तो सिगरेट भी निकलेगा.”

अब निशिकांत ने जवाब दिए बगैर माचिस निकाल कर सुरेश के हवाले कर दिया.

सुरेशवा बोला, “अबे, सिगरेट भी दे.”

निशिकांत से सिगरेट लेने के बाद सुरेश ने स्टाइल से उसे जलाया और उसका एक कश लेने के बाद जलती सिगरेट से सुतली वाले बम के पलीते में आग लगा कर पास ही पड़ी चापाकल की जंग लगी हुई एक पाइप के अंदर डाल दिया. अचानक बूम की आवाज के साथ पटाखा फट गया.

उधर पेड़ के नीचे बैठ कर लंच कर रहे लड़के पटाखे की आवाज को गोली की आवाज समझ सहम गए. इसके साथ ही सुरेशवा द्वारा गोली चलाने की खबर पूरे स्कूल में आग की तरह फैल गई.

पिंकूलाल ने अपना फर्ज निभाते हुए हेडमास्टर साहेब को खबर कर दिया कि सुरेशवा आपको मारने के लिए पिस्तौल लेकर घूम रहा है. इस खबर को सुनकर प्रिन्सिपल साहेब को दो-तीन रातें ठीक से नींद नहीं आई.

किन्तु, कुछ दिनों के अन्दर सब कुछ धीरे-धीरे सामान्य हो गया. लेकिन, एक-दो चीजें बदल गई थीं-सुरेशवा की स्कूल में अब फिर कभी पिटाई नहीं हुई और अब उसे देखते ही 'बर्गर-बच्चे' अपने सायकिल की हैण्डल दूसरी तरफ मोड़ देते थे.

दरअसल, 'बर्गर-बच्चा' नाम मीनू टीचर का दिया हुआ था. हुआ कुछ यूँ कि जमशेदपुर के हाईस्कूलों के कुछ विद्यार्थी सरकारी खर्च पर मीनू टीचर के नेतृत्व में पटना के संजय गाँधी जैविक उद्यान घूमने गए. निशिकांत के क्लास का पिंकूलाल भी इस टूर में शामिल था.

पिंकूलाल उनकी क्लास का सबसे आज्ञाकारी छात्र था. उसकी मम्मी उसके बालों में रोज तेल लगाती, रोज साबुन से नहलाती, उसके कपड़े

रोज साफ़ होते और उसके नाखून भी कटे होते. पिकूलाल, क्लास में सबसे अगली बेंच पर बैठता. हर टीचर को गुडमार्निंग कहता, हर क्लास खत्म होने के बाद ब्लैकबोर्ड साफ़ करता, टीचर की रजिस्टर ढोता और मौका देख कर क्लास की मुखबिरी भी करता. वह चेहरे से ही एक ऐसे टिपिकल लुक में रहता कि हर टीचर को यही लगता कि काश! कक्षा के सभी छात्र उसकी तरह ही होते.

किन्तु, अन्य छात्रों की स्थिति बिल्कुल उलट होती. जाड़े के दिनों में उन्हें जबरदस्ती पकड़ कर नहलाना पड़ता. सर में तेल तो दूर, कंधी भी कभी-कभी लगती. शर्ट के बटन या तो आधे होते या रंग बिरंगे होते. स्कूल ड्रेस की लगभग मटमैली हो चुकी इकलौती सफ़ेद शर्ट या तो रविवार को दुअन्नी साबुन से धोयी जाती या यूँ ही पानी में खंगाल कर धूप में सुखा दी जाती.

इस समूह में सफ़ेद बुशर्ट पहने साफ़-सुथरा पिकूलाल एकदम सफ़ेद बत्तख की तरह लगता.

खैर, लड़के पटना के संजय गाँधी जैविक उद्यान में घूम-फिर रहे थे. एक तरफ, सुरेशवा का ग्रुप संतरियों की नजर बचा कर बंदरों को ढेला चला-चला कर मार रहा था, और क्रुद्ध बन्दर उन्हें देख कर बार-बार गुर्रा रहे थे और दूसरी तरफ, पिकूलाल अपनी मम्मी के निर्देश के अनुसार पावरोटी के बीच में 'आलू की भुजिया' और 'टमाटर की जेली' भर कर बंदरों को खिला रहा था.

अचानक सुरेशवा के दिमाग में एक शैतानी सूझी. वह पिकूलाल के पास गया और उससे बड़े ही प्यार से बोला, “पिकू भाई, एक ठो पावरोटी हमको भी दे ना यार! हम भी बंदर को पावरोटी खिलाएंगे.”

पिकूलाल ने बिना किसी ना-नुकुर के पावरोटी का एक टुकड़ा सुरेशवा को दे दिया. इसके बाद पिकूलाल उसे समझाते हुए बोला, “ये ‘पावरोटी’ नहीं है सुरेश भाई. इसको ‘बर्गर’ कहा जाता है.”

लेकिन थोड़ी देर बाद ही सुरेशवा पावरोटी का टुकड़ा लेकर पिकूलाल के पास वापस लौट आया और बड़ी ही आत्मीयता से बोला, “पिकू भाई, बंदर तो हमको देखते ही भड़क जा रहे हैं, लेकिन लगता है, तेरी उनसे दोस्ती हो गई है. तुम ऐसा करो कि ये बर्गर तुम ही बंदरों को खिला दो!”

पिकूलाल अपनी तारीफ़ सुनकर खुश हो गया और सुरेशवा के हाथ से पावरोटी का टुकड़ा लेकर बंदरों के पिंजरे के पास चला गया. पिकूलाल के हाथ से ले कर पावरोटी खा रहे एक लोभी बन्दर ने पावरोटी का समूचा टुकड़ा एक बार में ही अपने मुँह में ठूस लिया. लेकिन, अगले ही पल बन्दर का एक झन्नाटेदार थप्पड़ पिकूलाल के गाल पर पड़ा. भयभीत पिकूलाल चिल्लाता हुआ वहां से पीछे भागा.

हल्ला सुनकर मीनू टीचर दौड़ती हुई वहाँ आ पहुँची. पिकूलाल कुछ बोले, इसके पहले ही सुरेशवा बोल पड़ा, “टीचरजी, पिकूलाल बंदर को बर्गर खिला रहा था. लगता है, किसी लड़के ने बदमाशी से इसके बर्गर में बुलेट वाला हरियर मरिचा डाल दिया था. बंदरवा वही मरिचा खा कर गुस्सा में इसको हबक लिया है.”

पिंकूलाल की हिम्मत नहीं हुई कि वह मीनू टीचर को सही बात बताये. मीनू टीचर नया-नया ब्याह कर सहरसा से जमशेदपुर आयी थीं. उन्होंने जिज्ञासा से पूछा, “ई बर्गर कउची होता है रे?” जवाब में सुरेशवा बोला, “हमको का मालूम, ‘बर्गर’ कउची होता है? पावरोटी का बीच में पिंकू आलू का भुजिया और टमाटर की मिठकी चटनी भर कर उसको ‘बर्गर’ कह रहा था.” अब मीनू टीचर ने गुस्से में पिंकूलाल को हिदायत देते हुए कहा, “देखो बर्गर बच्चे, ई सब ड्रामा बन्दरवा के सामने कर लिए, लेकिन बघवा के सामने मत करना.”

इस घटना के बाद से सुरेशवा और उसके गैंग के लड़कों ने पिंकूलाल को ‘बर्गर लाल’ कहना शुरू कर दिया. इधर, पटना से लौटने के बाद भी निशिकांत का मूड ठीक नहीं हुआ था. रूपा का उसके दीदी के देवर से चक्कर की खबर सुनकर गुस्से से भरे निशिकांत ने रूपा की तरफ देखना भी छोड़ दिया था. उधर, रूपा निशिकांत से मिलने कई बार घुरण सिंह के चूरन के ठेले पर आई, किन्तु निशिकांत को वहाँ नहीं पाकर वह भी मन-मसोस कर वापस चली गई.

निशिकांत अपने पहले इश्क में जबरदस्ती की चोट खाने के बाद कई महीनों तक मुहब्बत और नफरत के झूले में झूलते रहे. कई बार उनका मन किया कि जाकर रूपा से मिलें लेकिन उन्हें हमेशा उनके पुरुषोचित अहम ने रोक दिया. फिर धीरे-धीरे बात पुरानी हो गई. निशिकांत तो अरुण भईया की तरह फोसला ग्रुप के सदस्य नहीं बने. लेकिन निशिकांत के करीबी दोस्त संतोष पांडे थोड़े अलग किस्म के थे.

संतोष पांडे

निशिकांत की ही क्लास में पढ़ने वाले निशिकांत के मित्र संतोष पांडे जन्मजात जज्बाती थे. 14 साल की उम्र में जब दुसरे बच्चे हाफ-पैट पहन कर गली में गिल्ली-डंडा खेला करते, पांडेजी अमिताभ बच्चन स्टाइल में चौड़ी मोहरी वाली बेलबाटम पहन कर उचक-उचक कर हर्कुलस ब्रांड की सायकिल चलाते-फिरते थे. उनकी सायकिल के कैरियर में अंग्रेजी का 'इंडियन नेशन' अखबार दबा होता.

संतोष पांडे बात-बात पर अंग्रेजी बोलते. गली के बच्चे तो बच्चे, सब्जी बेचने वाली सहुआइन और दूध बेचने वाले बेचनराय भी उनकी ऑक्सफोर्ड वाली अंग्रेजी सुन कर सहम जाते. एक दिन पता चला कि इसके पीछे एक बेहद दिलचस्प कहानी है.

दरअसल पांडेजी को साकची के एक कान्वेंट स्कूल में पढ़ने वाली एक तमिल लड़की से एकतरफा इश्क गया था. इश्क इतना तेज कि एक दिन उन्होंने उसे रास्ते में रोक कर 'आई लव यू' बोल दिया.

लड़की स्मार्ट थी, उसने बड़ी विनम्रता से उनसे सवाल किया, "इट्स माय प्लेजर, बट हू आर यू?" पांडेजी ठहरे जज्बाती आदमी, वो जवाब देना चाहते थे, लेकिन शर्म के मारे इसलिये चुप रह गए, क्योंकि उन्हें ठीक से अंग्रेजी बोलनी नहीं आती थी. उस दिन उन्होंने अपने गाँव वाले बरहम बाबा की कसम खाई कि जब तक अंग्रेजी बोलना नहीं सीख लूँगा तब तक इसको जवाब नहीं दूँगा कि मैं कौन हूँ?

आज इस घटना के सालों बीत गए हैं, किन्तु पांडेजी आज भी जज्बाती होकर अंग्रेजी बोलना सीख रहे हैं. और वो लड़की 'श्यामली? वह तो 21 साल पहले ही श्यामली वर्णवाल बन गई थी. दरअसल, 23 साल पहले राजेश कुमार वर्णवाल ने ठीक पांडेजी की स्टाइल में उसका रास्ता रोककर 'आई लव यू' कहा था. इस बार भी लड़की ने राजेश कुमार वर्णवाल से वही सवाल किया, जो सवाल उसने पांडेजी से किया था. तब राजेश कुमार वर्णवाल ने उसको हिंदी में जवाब दिया था- "मैं राजेश कुमार वर्णवाल, हमलोगों का जुगसलाई मार्किट में साड़ी का होलसेल का बिजनेस है."

संतोष पांडे की तरह ही इस कमबख्त अंग्रेजी ने न जाने कितने ही नादान मुहब्बतों का गला घोट दिया था. कान्वेंट स्कूल में पढ़ने वाली लड़कियों से एकतरफ़ा मुहब्बत में पागल कितने ही हिंदी माध्यम के मासूम लड़कों ने इंग्लिश स्पीकिंग कोर्स में एडमिशन लिया होगा, रेपिडेक्स इंग्लिश स्पीकिंग कोर्स की किताबें खरीदी होंगी, और बरसों तक स्पोकेन इंग्लिश का नोट्स लिखवाने वाले थापा सर को 'गुड मॉर्निंग' और 'गुड इभनिंग' कहा होगा. लेकिन असर फिर भी वही- 'ढाक के तीन पात'.

संतोष पांडे के बाबूजी नन्हकू पांडे टाटा कंपनी में नौकरी करते थे. लेकिन, इस नौकरी के साथ-साथ वे पोथी-पतरा भी बांच लेते थे. दरअसल, उनके बाप-दादा भी कभी गाँव में पंडिताई करते थे. नन्हकू पांडे जब भी कभी शादी-ब्याह के मौकों पर कहीं बारात में जाते तो उनके बदन पर चावल की माड़ी और नील-टिनोपाल दी हुई सफेद चकचक धोती के साथ सफ़ेद सिल्क का कुर्ता विराजमान हो जाता.

शादी-ब्याह के अवसर पर उनके निशाने पर अक्सर दूसरे पक्ष के पंडित होते. नन्हकू पांडे जानबूझ कर दूसरे पक्ष के पंडित के श्लोकों और विवाह-पद्धति पर प्रश्न-चिन्ह खड़ा कर शादी में तमाशा खड़ा कर देते.

एक बार नन्हकू पांडे अपने प्रिय मित्र मिश्राजी के बेटे की बारात में दरभंगा गए. शाम को जब बारात दरवाजे पर लगी और द्वारपूजा की रस्म शुरू हुई तो नन्हकू पांडे ने अपने स्वभाव के अनुसार दुल्हे के ठीक बगल में अपनी जगह बनायी. जगह कम थी, इसलिए नन्हकू पांडे 'चुक्का-मुक्की' होकर बैठ गए. उधर कन्या पक्ष के पंडितजी ने जैसे ही एक श्लोक का उच्चारण आरम्भ किया, नन्हकू पांडे ने अपने स्वभाव के अनुसार उन्हें बीच में ही टोक दिया, "पंडीजी, रऊआ ई श्लोक ठीक से नइखी बोलत."

अचानक इस प्रकार से टोके जाने पर वधु-पक्ष के पंडितजी पहले तो थोड़े असहज हो गए किन्तु जल्दी ही संभल कर बोले, "का गलती है, हमारा श्लोक मैं?" जवाब में नन्हकू पांडे ने चुक्का-मुक्की बैठे-बैठे ही वह श्लोक पढ़ दिया. लेकिन लड़की पक्ष के पंडित शायद नन्हकू पांडे से भी बड़े मुँहफट थे. वह उनका मजाक उड़ाते हुए बोले, "हो सकता है आरा जिला में चुक्का-मुक्की बैठ कर मन्त्र पढ़ा जाता होगा, लेकिन हमलोगों के यहाँ तो चुक्का-मुक्की बैठ कर कुछ और किया जाता है."

नन्हकू पांडे को इस बात का बहुत बुरा लगा कि वधु-पक्ष के पंडित ने उनके गृह-जिले 'आरा' के ऊपर इतना बड़ा कमेंट कर दिया. उन्होंने गुस्से से भड़कते हुए प्रश्न किया, "जब आरा जिला इतने खराब है तो बेटी ब्याहने कैसे चले आये?" इधर आरा जिला के नाम पर लड़के

पक्ष के कई लोग भी नन्हकू पांडे के समर्थन में आ गए. लड़के के मामा रामजतन मिसिर को भी ताव आ गया. वे गुस्से से बिफरते हुए बोले, “हम तो जीजाजी से सुरुए से कह रहे थे कि अपना जिला-जवार में शादी कीजिये, लेकिन हमारे बहनोई बड़का फारवर्ड बने हुये हैं. चले हैं, अपना जिला -जवार छोड़ कर दरभंगा में बेटा ब्याहने!”

अपने प्रिय साले का ताना सुनकर लड़के के पिता को भी कन्या-पक्ष पर गुस्सा आ गया. वे पिनकते हुए लड़की के पिता ओझाजी से बोले, “आपलोग वर को बियाह करने के लिए मंडप में ले जाइए. हम लोग बियाह में बाधक नहीं बनेंगे. लेकिन, अब कोई भी बाराती आपके घर का पानी भी नहीं पीयेगा.” और इसके साथ ही पंद्रह मिनट के अन्दर-अंदर लगभग सारी बारात जनवासा वापस लौट गई.

इधर निशिकांत और उनकी टीम के लड़के नागिन डांस करके सुस्ता ही रहे थे कि सुरेशवा उधर आ गया और बोला, “चल बे निशिकांत, वापस जनवासा. बारात का इन्सल्ट हो गया है.” प्यास से बेहाल नागिन डांस-ग्रुप के कई लड़के एक साथ पूछ पड़े, ‘क्या हुआ बे?’ जवाब में सुरेशवा बोला, “नन्हकू पांडे चाचा कह रहे हैं कि लड़की-साइड के पंडित ने दूल्हा के बाबूजी को गाली दी है.”

थोड़ी देर बाद निशिकांत और उसके साथी भूखे-प्यासे जनवासा पहुँचे तो देखा, नन्हकू पांडे एक चारपाई पर गमछे से मुँह ढक कर सोये हुए थे. निशिकांत ने जब नन्हकू पांडे को गहरी नींद में सोये देखा तो उनका माथा ठनका- ‘ई पंडित तो बगैर पेट-पूजा किये सो नहीं सकता, जरूर कोई बात है.’ फिर उनकी चारपाई के नीचे झोले में रखे लोटे को देखा तो सारा माजरा समझ में आ गया.

दरअसल, नन्हकू पांडे वहां से लौटने के बाद पोटली में से काम भर सतुआ निकाल कर लोटे में घोल कर गटकने के बाद मुँह पर गमछा रख कर गहरी नींद में सो गए थे.

अब निशिकांत धीरे से लड़के के पिता के पास गए और पूछा, “चाचा, सुने हैं कि लड़की साइड का पंडित आपको गाली दिया है?” जवाब में लड़के के पिता लाल-पीले होते हुए बोले, “हमको गाली देता तो टंगरिये चीर देते सरऊ का. पांडेजी को गाली दिया है. देखो बेचारा कैसे दुखी होकर भूखे-प्यासे सोया है.” अब निशिकांत सारा माजरा समझ गए.

थोड़ी देर बाद वे चुपचाप उठकर सुरेशवा के पास गए और बोले, “अबे, संतोष पांडे का बाप सबको तूतिया बना रहा है. चल, धीरे से लड़की वालों के यहाँ से खाना खा कर आ जाते हैं .” सुरेशवा तो जैसे इस प्रपोजल का इन्तजार ही कर रहा था बोला, “चल बे, वहाँ मछली बना है.”

“अबे, पंडित लोग का शादी में मछली?” निशिकांत ने आश्चर्य से पूछा.

“गुरु ई मिथिलांचल है, यहाँ श्राद्ध में भी मछली चलता है,” सुरेशवा हँसते हुए बोला.

इधर निशिकांत और सुरेशवा लड़की वालों के यहाँ जाकर मछली-भात खाते रहे और उधर लड़के के बाबूजी और बाकी सारी बारात रातभर भूख और गुस्से से कुढ़ती रही.

सुबह पांच बजे जब नन्हकू पांडे की नींद खुली तो लोटा लेकर चुपचाप खेतों की ओर निकल गए. एक घंटे बाद जब वह स्नान-ध्यान कर चुके तो उन्हें चाय-नाश्ते की जरूरत महसूस हुई. अब, वे धीरे से उठ कर लड़के के पिता मिश्रा जी के पास गए, और बोले, “मिसिरजी

जो हुआ, सो हुआ. रात की बात अलग, सुबह की बात अलग. अब लड़की आपकी 'पतोहू' बन गई है, और उसके पिता ओझाजी आपके 'समधी. आप बड़प्पन का परिचय दीजिये और बात खतम कीजिये."

इधर, लड़के के पिता मिश्राजी ने भूख से बेहाल बारातियों की तरफ एक नजर देखा और सहमति की मुद्रा में अपना सर हिला दिया.

अब नन्हकू पांडे धीरे से जनवासा से बाहर निकले और चुपचाप लड़कीवालों के दरवाजे पर पहुँच गये और देखा कि लड़की के पिता ओझाजी अपने कुछ रिश्तेदारों के साथ चौकी पर बैठ कर चाय पी रहे थे.

नन्हकू पांडे को देखते ही वे उठ खड़े हुए. नन्हकू पांडे उनका हाथ पकड़ कर धीरे से एक किनारे ले गए, फिर उनके हाथ को आत्मीयता से दबाते हुए समझाते हुए बोले, "आप लड़कीवाले हैं. आपके समधी आज आपके दरवाजे पर आये हैं, कल आपकी बेटी उनके घर जायेगी. झगडा ठीक नहीं है. आपके समधीजी को हम समझा दिए हैं. चुपचाप हाथ जोड़ कर उनके सामने खड़े हो जाइयेगा. सब ठीक हो जायेगा." फिर, उन्हें अचानक कुछ याद आ गया. वे अपने शब्दों में मिसरी घोलते हुए बोले, "एक काम और कीजियेगा, अपने साथ गरम-गरम चाय के साथ पूड़ी और जिलेबी भी छनवा कर जनवासा में लेते आइयेगा." ओझाजी ने सहमति में अपना सर हिला दिया.

लड़की के पिता ओझाजी को समझाने के बाद नन्हकू पांडे वापस जनवासा पहुँचे और लड़के के पिता मिसिरजी के बगल में बैठ कर धीरे से बोले, "आपके समधी आपसे रात की घटना के लिए क्षमा मांगने आ रहे हैं. अब ओझाजी की बेटी आपकी पतोहू हो गई है.

अगर आप उसके बाप को बेइज्जत करिएगा तो बुढ़ापा में आपको एक कप चाय भी नसीब नहीं होगा. इसलिए, मामले को अब यहीं खतम कीजिये.” उनकी बात सुनकर लड़के के पिता ओझाजी अचकचाते हुए बोले, “अरे, पांडेजी ऊ सब बेइज्जत आपको किया था, अगर आप उनको माफ़ कर दिए त बात खतम.”

उसी समय ओझाजी अपने छोटे बेटे और कुछ रिश्तेदारों के साथ जनवासा में आ गए. पीछे से चार-पांच टोकरियों में पूड़ियाँ और जलेबियाँ और गरम चाय भी आ गई. इसके बाद ओझाजी हाथ जोड़ते हुए लड़के के पिता मिश्राजी के पैर छूनेके लिए नीचे झुके. इधर मिश्राजी ने भी मौका ताड़ते हुए उन्हें अपने अंक में भर लिया, और, इसके साथ ही पांडेजी की अगुआई में रातभर की भूखी बारात, पूड़ियों और जलेबियों पर टूट पड़ी.

इधर सुरेशवा मन मसोसते हुए निशिकांत से बोला, “ई साला संतोष पांडे का बाप का चक्कर में मिथिलांचल का शादी देखने का सारा मजा किरकिरा हो गया. पंडइया साला हर शादी में ड्रामा करवा देता है. अपने साला, एक लोटा सत्तू का सरबत के साथ डाबर का लवणभास्कर चूर्ण फांक कर सो जाता है, और समुच्चे बारात को भूखा रख देता है.”

जमशेदपुर कोआपरेटिव कॉलेज: 1985

निशिकांत ने फर्स्ट डिविजन से दसवीं की परीक्षा पास कर जमशेदपुर के सबसे बड़े कॉलेज में दाखिला ले लिया.

निशिकांत को शुरू से ही विज्ञान की कक्षाएँ बेहद बोरिंग लगती थीं. रसायनशास्त्र में रस नाम का कोई आयन नहीं था. रसायनशास्त्र की लेब्रोटरी में हाइड्रोजन सल्फाइड की बदबू फैली रहती थी. वनस्पति शास्त्र पढ़ने वाली लड़कियाँ फूलों में खुशबू खोजने की बजाय उनकी पंखुड़ियाँ तोड़ कर 'पुंकेसर' और 'स्त्रीकेशर' निकलतीं और फिर उन्हें बेसिन में बहा देतीं. जंतुशास्त्र की लेबोरेट्री में मरे हुए तेलचट्टों और मेढकों को छूने में भी निशिकांत को घिन आती.

एक अन्य समस्या पढ़ाई की भाषा लेकर थी. तमाम कोशिशों के बाद भी अंग्रेजी में लिखी गई बॉटनी और जूलॉजी की किताबें उनके पल्ले नहीं पड़ रही थीं. जहाँ, एक तरफ, उनके अंग्रेजी माध्यम वाले सहपाठी सिलेबस की किताबें पढ़ रहे थे वहीं दूसरी तरफ उनका ज्यादा समय भार्गव हिंदी-अंग्रेजी शब्दकोश को रटने में बीत रहा था. वे समझ रहे थे कि वे समय से दो साल पीछे चल रहे हैं.

वे अक्सर समय निकाल कर हिंदी के प्रोफेसर सुजय सिंह 'अमृत' की क्लास में बैठ जाते. हिंदी के प्रोफेसर सुजय सिंह 'अमृत' कॉलेज के सबसे लोकप्रिय प्राध्यापकों में से एक थे.

प्रोफेसर की जिंदगी के अपने नियम थे: लम्बे बाल, कार्ल मार्क्स की तरह बड़ी हुई दाढ़ी, घुटनों तक कुरता, पैरों में हवाई चप्पल और हर क्लास के बाद सिगरेट के चार कश.

प्रोफेसर के सर से पैर तक पसरी हुई आवारगी कॉलेज में नए-नए आये छात्रों को बहुत रास आती थी.

एक दिन प्रोफेसर 'अमृत' कक्षा में पढ़ा रहे थे" "इन्सान को उम्र नहीं बल्कि उसके जीवन की ऊब मार देती है. इन्सान अपने जीवन की नीरसता से निकलने के लिए तमाम उम्र नशा करता है. वह या तो महत्वाकांक्षा की आड़ में जुनून की हद तक काम करता है या फिर शराब के नशे में खुद को मदहोश कर लेता है. चालीस की उम्र के बाद इन्सान के अंदर की जवानी की उमंगें खतम होने लगती हैं . झुकती कमर, सफेद होते बाल और गर्दन के पास लटकते चमड़े के लोथड़े उसकी जिजीविषा को कमजोर करने लगते हैं, और वह धीरे-धीरे मरने लगता है. ऐसे में उसके लिए आत्मविश्वास बनाये रखने के लिए कोई नशा करना जरूरी हो जाता है. नशा काम का हो, धर्म का हो या फिर दारू का! करना तो पड़ता है. जो इन्सान नशा नहीं करता वह जिन्दा नहीं रहता, और जो जिन्दा रहते हैं, वे उपेक्षा, नीरसता और एकाकीपन से भरी जिन्दा लाश होते हैं. उनके अंदर का मरा हुआ आदमी अपने आस-पास की जीवंतता को मृतप्राय कर देता है."

वे आगे बोले, 'धर्म भी नशा है, और कर्म भी एक नशा है! अगर आप धर्म का नशा नहीं करेंगे, कर्म का नशा नहीं करेंगे तो कोई और नशा करेंगे. हमारे पूर्वज इस तथ्य से भली-भांति अवगत थे, इसीलिए, वेद से धर्म का नशा आया और गीता से कर्म का नशा! और जो इन दोनों में नहीं आया वो 'मधुशाला' से आया,"

फिर, थोड़ी देर रुक कर वे हँसते हुए बोले, "अब यह तुम पर निर्भर है कि जिन्दा रहने के लिए तुम कौन सा नशा करना चाहते हो; धर्म का, कर्म का या फिर शराब, गांजा या अफीम का?"

इधर, सुरेशवा, क्लास में पीछे बैठ कर प्रोफेसर का लेक्चर रोज की तुलना में आज कुछ ज्यादा ही गौर से सुन रहा था. अचानक, वह धीरे से निशिकांत के कान में बोला, “अबे गुरुजी जी तो नशा करने के लिए कह रहे हैं!”

निशिकांत ने जवाब दिया, “लेकिन धरम-करम और काम-धाम करने के लिए भी तो कह रहे हैं.”

सुरेशवा झल्ला कर बोला, “ई उमर में कौन पूजा-पाठ, काम-धाम करेगा बे? जब एतना बड़ा विद्वान् टीचर नशा करने को कहिये रहा है तो आज से दारू शुरू कर देते हैं.”

निशिकांत खीझते हुए बोले, “पगला गया है क्या बे? बाऊजी पीठ का हड्डी तोड़ देंगे. हम तो नहीं पीयेंगे. तुझे पिए के है त पी.”

सुरेशवा ने उनकी बात को नजरअंदाज करते हुए धीरे से पूछा, “कुछ पैसा है का?”

निशिकांत ने पतलून की जेब से प्लास्टिक का पर्स निकलते हुए पूछा, “पंद्रह रुपया है, इतना मैं हो जाएगा?”

सुरेशवा बोला, “चल देखते हैं.”

निशिकांत ने दृढ़ता के साथ कहा, “दारू का दुकान पर हम नहीं जायेंगे.” सुरेशवा हथियार डालते हुए बोला, “ठीक है, मोटरसायकिल का चाभी दे.”

“सुरेश भाई, आज 10 रुपया का पेट्रोल भरवाए हैं. साक्ची बाजार से आगे मत जाना. बिना पेट्रोल का येज्दी ठेलने में पैंट फट जाता है,” निशिकांत ने लाचारगी भरे शब्दों में अनुरोध किया. जवाब में सुरेश ने हँसते हुए येज्दी मोटरसायकिल की चाभी उनसे अपने हाथ में ले ली.

सुरेशवा करीब आधे-घंटे बाद लौटा तो उसके पास अखबार में लिपटी हुई बीयर की एक बोतल थी. इसके बाद, दोनों कॉलेज से सटे जुबली पार्क में पहुंचे.

सुरेशवा बोला, “बीयर है बे! दुकानदार बोलता है कि बीयर तो जौ का पानी होता है. एक टाइप का हेल्थ टानिक! इससे नशा नहीं होता है” फिर, सुरेशवा दोस्ती का हवाला देकर बोला, “मेरे लिए भाई! दोस्ती के नाम पर दो घूंट मार, पक्का मजा आएगा.”

उत्तर में निशिकांत बोले, “नहीं बे, घर में बाउजी को पता चल गया तो मार के चमड़ी उधेड़ देंगे.”

लेकिन सुरेशवा के आगे निशिकांत की एक न चली. एक दो घूंट लेने के बाद निशिकांत भी मूड में आ गए.

कॉलेज में निशिकांत ने दो नयी आदतें सीखीं. पहला कॉलेज से भाग कर सिनेमा देखना और दूसरा, कैंटीन में बैठ कर दोस्तों के साथ चाय के साथ ‘आलूचाप’ और ‘समोसे’ के मजे लेना.

इधर, संतोष पांडे का अंग्रेजी के प्रति जुनून अपनी चरमसीमा पर था. उसने मानगो के आदिल सर के यहाँ स्पोकेन इंगलिश की ट्रेनिंग लेनी शुरू कर दी थी. संतोष पांडे अक्सर निशिकांत और सुरेशवा के साथ

को आपरेटिव कॉलेज के कैटीन में बैठ कर चाय के साथ 'आलूचाप' और 'समोसे' के मजे लेते. उनकी लठ्ठमार अंग्रेजी से चाय-समोसे का मजा कई गुना बढ़ जाता.

आदिल सर के यहाँ ट्रेनिंग का असर कितना था इसका पता इसी बात से लगाया जा सकता था कि संतोष पांडे अब भी सर्टिफिकेट को 'साटीफीटीक' और फुटपाथ को 'फुतफात' कहते. उनके लिए 'कॉलेज क्वीन' अभी भी 'कॉलेज क्यूँ' थी.

संतोष पांडे की अंग्रेजी कोचिंग वाला दोस्त मयंक श्रीवास्तव अक्सर कॉलेज की समोसा- मंडली में शामिल हो जाता. एक दिन उसने संतोष पांडे को सलाह दिया कि वह अपनी अंग्रेजी ठीक करने के लिए अंग्रेजी फिल्में देखा करे. संतोष पांडे ने भी उसकी सलाह झट से मान ली.

अगले दिन मयंक सुबह करीब दस बजे कॉलेज आया और संतोष पांडे को अंग्रेजी फिल्म दिखाने के लिए साथ ले कर चला गया. उन दिनों जमशेदपुर के कई सिनेमाहाल सुबह के शो में वयस्क लोगों के लिए अंग्रेजी की एडल्ट फिल्में दिखाते थे.

जब दोनों सिनेमाहाल के अंदर पहुंचे तो हाल के अंदर की लाइट्स बंद हो चुकी थीं. मयंक ने संतोष पांडे को सिनेमाहाल के सबसे स्पेशल क्लास 'डीसी' में ले जाकर बैठा दिया और चिनियाबादाम लाने की बात कहकर बाहर चला गया. स्पेशल क्लास डीसी में महज पंद्रह-बीस सीटें रही होंगी.

अंग्रेजी फिल्म में बेहद उत्तेजक सेक्स सीन थे. लगता था, जैसे सिनेमाहाल वाले ने जानबूझ कर फिल्म के बीच में किसी ब्लू फिल्म

की रील प्रोजेक्टर पर चढ़ा दी हो. इधर संतोष पांडे भी अंग्रेजी सीखना भूल कर फिल्म के गुलाबी दृश्यों में खो गए.

लगभग पैंतालीस मिनट बाद इंटरवल हुआ और सिनेमाहाल की लाइट्स जल गईं. संतोष पांडे ने अपनी दायीं ओर मयंक वाली सीट पर नजर डाली. मयंक अभी नहीं लौटा था. फिर, अचानक ही उनकी नजर अपनी बायीं बाजू वाली सीट पर बैठे शख्स पर गई तो वे हक्के-बक्के रह गए. उनकी बायीं बाजू वाली सीट पर उनके पिता नन्हकू पांडे बैठे थे.

आकस्मात् ही बाप-बेटे की नजरें मिलीं. दो पल तक दोनों किंकर्तव्यविमूढ़ हो वहीं बैठे रहे. और फिर, अचानक दोनों बदहवासी की अवस्था में अपनी-अपनी सीट से उठ कर सिनेमाहाल के दो अलग-अलग गेटों से बाहर निकल गए.

अगले दिन जब मित्र-मण्डली कॉलेज के कैंटीन में बैठी तो संतोष पांडे नदारद थे. मयंक ने समोसे के आर्डर दिए.

सुरेशवा ने मयंक से पूछा, “संतोष कहाँ है बे?”

मयंक हँसता हुआ बोला, “अपने बाबूजी के साथ बैठ कर एडल्ट फिल्म देख रहा होगा.”

तभी उधर से संतोष पांडे भी कैंटीन में आ गये.

उन्हें देख कर मयंक उसका मजाक उड़ाता हुआ बोला, “क्या बे, बाप के साथ ब्लू फिल्म देख कर मजा आया न? मेरे को मालूम था तेरा फादर हर शनिवार को नून शो में एडल्ट फिल्म देखने मेरे घर के पास वाले सिनेमाहाल में आता है।

निशिकांत ने गंभीरता से पूछा, “क्यों क्या हुआ बे?” इसके बाद मयंक ने मजाकिया अंदाज में रस ले-ले कर पूरी कहानी सुना दी।

इधर संतोष पांडे सर झुका कर चुपचाप बैठा रहा। तभी अचानक निशिकांत ने संतोष पांडे की तरफ देखा, संतोष पांडे की आँखों से झर-झर आंसू गिर रहे थे।

संतोष पांडे को इस प्रकार रोते देखकर निशिकांत का मूड खराब हो गया। उन्होंने मयंक से बड़े प्यार से पूछा, “भाई, तेरे घर में कितने शौचालय हैं?”

मयंक ने हँसते हुए जवाब दिया। “एक ही है, हगना है क्या?”

अब निशिकांत ने गुस्से से चिल्लाते हुए पूछा, “साले, क्या तू अपने बाप के साथ-साथ उसमें हगने जाता है?”

उसका सवाल सुनकर मयंक गुस्से से भर उठा। उसने पास पड़ा एक लोहे का चिमटा उठा लिया और निशिकांत पर हमले के लिए झपटा। लेकिन, तभी सुरेशवा ने बिजली की फुर्ती से अपनी कमर में खौंसी देसी पिस्तौल निकाली और मयंक पर फायर कर दिया। इस बार गोली असली थी।

गोली मयंक की कनपटी के बगल से निकल गई. किन्तु, भयभीत मयंक वहीं फर्श पर झूँटकर गिर पड़ा. अब सुरेशवा आगे बढ़ा और उसने जोर की एक लात जमीन पर पड़े मयंक की कमर के नीचे मारी, लेकिन, मयंक दहशत के मारे वहीं जमीन पर चुपचाप पड़ा रहा.

निशिकांत अवाक् होकर सुरेशवा की तरफ देखते रहे. सुरेशवा सर्द लहजे में बोला, “अबे पंडित, अब ये मत बोलना कि थोड़ा ज्यादा हो गया. ज्यादा तो तब होता जब मैं इसकी खोपड़ी उड़ा देता.”

जमशेदपुर 1988: अपराध का समाजशास्त्र

अस्सी के दशक में जमशेदपुर में ऑर्गेनाइज्ड क्राइम की शुरुआत हो रही थी. कुछ बड़े अपराधी गैंग थे जो बड़े ठेकेदारों के लिए रेलवे, पीडब्ल्यूडी, पीएचडी जैसे सरकारी विभागों में ठेका मैनेज करने का काम करते थे. छोटे-मोटे गिरोह भी बन रहे थे, जो सरकारी जमीनों को अतिक्रमित कर बेच रहे थे.

अस्सी के दशक के अंतिम सालों में इन्हीं छोटे गिरोहों ने बड़े ठेकेदारों की जगह ले ली और अब, सीधे तौर पर इन अपराधी गिरोहों के बीच सरकारी ठेके, कंपनी के स्क्रेप, नदी के बालू और सरकारी जमीन पर कब्जे के लिए गैंगवार छिड़ गई.

शांतिर अपराधी ठेकेदारों के लिए कोआपरेटिव कॉलेज वह जगह थी जहाँ नए लड़के मिलते थे-ऐसे लड़के जो थ्रिल और मजे के लिए गोलियां चलाते थे और इस बात पर खुश होते थे कि वे भाई के आदमी हैं. लेकिन कुछ ऐसे लोंडे भी थे जो रातों-रात तरक्की करना

चाहते थे. उनकी मंशा अपराध की दुनिया के बड़े नामों के साथ खुद को जोड़ कर तरक्की के रास्ते पर रफ़्तार पकड़ने की होती थी.

दरअसल 45 की उम्र पार करते-करते एक शातिर अपराधी के अन्दर की दिलेरी मरने लगती है और उसकी जगह शकुनी की कूटनीति लेने लगती है. यानि कि गोली खुद नहीं, किसी नए लौंडे से मरवायेंगे. कॉलेज के नए लौंडे उनके हथियार बनते थे. अपराध जगत के ये धुरंधर पहले नए लड़कों को संरक्षण का भरोसा देकर पिस्तौल थमाते, एक-आध अपराध कराते और फिर थाना, कोर्ट और वकील के चक्कर में ऐसा फांसते कि भाई सेवा में ही नए लड़कों की सारी जवानी निकल जाती. सुरेशवा भी स्वाभाविक रूप से इसी अपराध जगत का हिस्सा बनने का प्रयास कर रहा था.

दूसरी तरफ, निशिकांत, सरकारी व्यवस्था में यकीन कर इस उम्मीद के सहारे पढ़ाई-लिखाई कर रहे थे कि मेहनत करने पर देर-सबेर कहीं न कहीं सरकारी नौकरी जरूर मिल जाएगी. किन्तु दो बार मेडिकल की प्रवेश परीक्षा में फेल होने के बाद निशिकांत की हिम्मत धीरे-धीरे टूट भी रही थी. सरकारी नौकरी मिलना अब संभव नहीं लग रहा था. भोजपुरी के एक पॉपुलर गीत के बोल उनके जेहन में बार-बार कौंध जाता था:

"अस्सिये से कईके बीए बबुआ हमार कम्पटीशन देताs

एम ए में ले के एडमिशन कम्पटीशन देताs....."

एक दिन सुरेशवा अपने बड़के बहनोई के साथ कोआपरेटिव कॉलेज आया. सुरेशवा का बहनोई पटना के किसी निजी कॉलेज में अवैतनिक

लेक्चरर था. थोड़ी देर इधर-उधर की बातों के बाद सुरेशवा ने निशिकांत से कहा, "अबे, कोई मेडिकल कॉलेज में एडमिशन वाला कैंडिडेट मिले तो बताना. जीजाजी, बिहार के किसी मेडिकल कॉलेज में एडमिशन मैनेज करा देंगे."

निशिकांत ने गंभीर होते हुए पूछा, "कितना लगेगा?"

सुरेशवा के बहनोई ने उत्तर दिया, "डेढ़ लाख में फाइनल होगा. पचीस हजार तुम लोग का हिस्सा रहेगा. एकजाम से एक दिन पहले रात में क्वेश्चन पेपर मिल जाएगा. अगर क्वेश्चन पेपर नहीं मिला तो पैसा वापस! लेकिन, पूरा पैसा पहले देना होगा."

निशिकांत ने आशंका जाहिर की, "अगर सामने वाला पैसा लेकर भाग गया तो?"

"भागेगा तो दीघा के दियारा में ले जाकर उसका गर्दन रेत देंगे." सुरेशवा के बहनोई ने बेहद सहजता के साथ जवाब दिया. वह आगे बोला, "एक और विकल्प है. कैंडिडेट का जगह कोनो टॉपर एकजाम देगा. इसमें पचास हजार पहले, बाकी काम होने के बाद."

"लेकिन इसमें तो बहुत रिस्क है," निशिकांत बोले.

"ज्यादा रिस्क पढ़ कर नौकरी खोजने में है. सिर्फ 20 परसेंट जेनुइन कैंडिडेट का सलेक्शन होता है. अस्सी परसेंट सीट पहले से ही बिका होता है," सुरेशवा के बहनोई ने हँसते हुए उत्तर दिया.

निशिकांत ने सवाल किया, "सरकार को पता नहीं चलता है क्या?"

सुरेशवा का बहनोई बोला, “भाई मेरे, फिफ्टी परसेंट कैंडिडेट तो मंत्री और बड़का अफसर लोग का रिजरब होता है.” अब, सुरेशवा ने सवाल किया, “जब सब सेटिंगे है, त स्टूडेंट लोग इ कोचिंग-कोचिंग काहे खेल रहे हैं ?” इस बात पर उसके बहनोई ने गंभीर शब्दों में जवाब दिया, “तोरा खेले के है त तू भी खेल. कोचिंग सेंटर में भी बहुते माल है. सुरेस बाबू, आज बाजार का भाव नहीं है बल्कि भाव का बाजार है. सबके अपने लड़का सब को डाक्टर इंजीनियर बनावे के है, और जब तक माँ-बाप के मन में ई भाव बनल रहेगा, तब तक कोचिंग का धंधा सोना उगलता रहेगा.”

निशिकांत जब वापस घर लौटे तो उनका मन भरा-भरा सा था. उन्होंने किताबों से भरे अपने स्टडी-टेबल की तरफ देखा. आज ये किताबें और कापियाँ उन्हें तरक्की का रास्ता नहीं दिखा पा रही थीं, अलबत्ता वे कचरे का ढेर जरूर लग रही थीं. उनका मन हुआ बाबूजी से अनुरोध करने का कि गाँव की एक-दो बीघा जमीन बेच कर उनका मेडिकल कॉलेज में एडमिशन करा दें.

वे मन कड़ा करके पिता के कमरे की तरफ बढ़े, देखा, आँगन में अम्मा सुई धागे से बाबूजी की फटी हुई पतलून रफू कर रही थी. तभी अचानक एक पतंग कट कर हवा के झोंकों से इधर-उधर डोलती आँगन में आ गिरी. मोहल्ले के आठ-दस बच्चे कटी हुई पतंग पर झपटे. आधे मिनट के अन्दर पतंग के टुकड़े-टुकड़े हो गए. लड़के फटी हुई उस पतंग को आँगन में ही छोड़ दूसरी कटी हुई पतंग लूटने के लिए बाहर भागे.

आंगन में हलचल भांप कर बाबूजी अपने कमरे से निकले और फटी हुई पतंग देख कर सारा माजरा समझ गए. फिर वह निशिकांत की तरफ मुखातिब होकर बोले, “तुम्हारे दादा अक्सर कहते हैं कि डोर से कटी हुई पतंग और जमीन से कटा हुआ आदमी दुन्नो का अंत एकके जईसा होता है.”

पिता की बात पर निशिकांत को अपने गाँव के हरे-भरे पुश्तैनी खेत याद आये. वे लोग याद आये, जिन्होंने अपने पुश्तैनी खेतों की रक्षा के लिए अपनी जानें दे दी थीं. उन्होंने मन में सोचा, “मेडिकल की पढ़ाई जाये भाड़ में! घूस देने के लिए बाप-दादा का खेत नहीं बिकेगा. खुद को कटी पतंग बनने से रोकना होगा. फिर, उन्होंने खुद को भरोसा दिलाया, “कभी तो गाँव के हालात बदलेंगे, कभी तो हमारे खेत हरे-भरे होंगे. अगर हम नहीं खेती करेंगे तो हमारी आद-औलादें इन खेतों में फसलें उगायेंगी. चलो, न करें खेती, किन्तु कम से कम उनके पास इस सवाल का जवाब तो होगा कि वे किस गाँव की हैं?”

कुछ दिनों बाद, एक दिन सुरेशवा सुबह-सुबह निशिकांत के घर आ धमका और बोला, “चल बे, नागा भाई का टैंडर में चलना है.” फिर वह, निशिकांत को ताव दिलाता हुआ बोला, “कलेजा मजबूत है ना बे? वहाँ गोली-बंदूक चल सकता है.”

वैसे निशिकांत न तो सुरेशवा के तथाकथित नागा भाई के बारे में कुछ ज्यादा जानते थे और न ही टैंडर-वैंडर के बारे में उन्हें ज्यादा कुछ पता था. लेकिन, उन्होंने सुरेशवा के कलेजा मजबूत होने वाले जुमले का जवाब देते हुए ताव से कहा, “आरा जिला घर बा त कौन बात के डर बा?”

“अगर डर नहीं बा तो मोटरसायकिल निकाल,” सुरेशवा हँसते हुए बोला.

थोड़ी देर बाद दोनों निशिकांत की मोटरसायकिल से पीडब्ल्यूडी आफिस पहुंचे. पीडब्ल्यूडी आफिस के सामने टैंडर भरने वालों और उनके समर्थकों का मजमा लगा हुआ था.

पीडब्ल्यूडी आफिस पहुँचने के बाद सुरेशवा कुछ देर तक गेट के बाहर ही खड़ा रहा. इसी दौरान सुरेशवा के तथाकथित नागा भाई भी अपने समर्थकों के साथ पीडब्ल्यूडी आफिस पहुँच गए. सुरेशवा ने आगे बढ़ कर उनका चरण स्पर्श किया. जवाब में नागा भाई ने उसकी पीठ ठोकते हुए पूछा, “कॉलेज में कौनो दिक्कत नहीं है न?” सुरेशवा ने भी विनम्र लहजे में उत्तर दिया, “नागा भाई, जब आप हईये हैं त का प्रोब्लम!”

नागा भाई मुस्कराते हुए आगे बढ़ गए.

थोड़ी देर बाद, नागा भाई का एक गुर्गा सुरेशवा के पास आया और बोला, “शाम को भईया के यहाँ मटन पार्टी है. दारू का भी इंतजाम है. नागा भाई आने के लिए कहे हैं.”

अचानक गुर्गे की नजर निशिकांत पर पड़ी, पूछा, “ई कौन है?”

“ई हमारा जिगरी दोस्त है,” सुरेशवा ने जवाब दिया.

ठीक है, “भईया इसको भी बोले हैं, शाम को मटन पार्टी में आने के लिए,” और वह आगे बढ़ गया.

निशिकांत ने आश्चर्य से सुरेशवा से पूछा, “अबे, तेरे नागा भाई हमको कब से जानने लगे?” उत्तर में सुरेशवा धीरे से हँसा, “नागा भाई सबको पहचानते हैं, और केकरो नहीं पहचानते. डेढ़ साल से नागा भाई से हम रिक्वेस्ट कर रहे हैं कि किसी विभाग में रजिस्ट्रेशन करवा दें. छोटा-मोटा ठेका हमको भी मिल जाए. लेकिन, नागा भाई चालाकी से मुर्गा-दारू का पार्टी देकर टरका देते हैं .”

इसी बीच नागा भाई का एक गुर्गा सुरेशवा के पास आकर बोला, “त्रिपाठी गुप मैनेज नहीं हो रहा है. टैंडर रूकवाना पड़ेगा, रेडी रहना.” सुरेशवा ने सहमति में अपना सर हिलाया.

इसके ठीक पांच मिनट बाद ऑफिस के अन्दर से गाली-गलौज एवं उठा-पटक की आवाजें आने लगीं और लोग बदहवास होकर आफिस से निकल कर बाहर की तरफ भागे.

इधर नागा भाई के चमचे दहशत फैलाने के लिए हवा में फायरिंग करने लगे.

तभी अचानक एक गोली सुरेशवा की दायाँ जांघ से टकराई और उसकी दायाँ जांघ से खून भल-भल कर गिरने लगा. सुरेशवा दर्द से कराहता हुआ वहीं जमीन पर बैठ गया. फिर, वह रामखेलवान की तरफ देखता हुआ जोर से चीखा, “अबे जल्दी गाड़ी स्टार्ट कर, और मुझे लेकर भाग यहाँ से.”

निशिकांत ने घबराहट में येज्दी मोटरसायकिल में चार-पांच किक मारी, मोटरसायकिल स्टार्ट नहीं हुई.

इधर सुरेशवा दर्द से कराहते हुए बोला, “भाई, घबरा मत, चोक लेकर किक मार मोटरसायकिल स्टार्ट हो जाएगी.”

चोक लेते ही मोटरसायकिल स्टार्ट हो गई.

सुरेशवा आगे बोला, “हमको गौरमेंट अस्पताल ले चल.”

“अबे, सरकारी अस्पताल में सही इलाज नहीं होगा. टाटा अस्पताल ले चलते हैं ” निशिकांत ने विरोध किया.

“अबे पंडित, जितना बोल रहे हैं, उतने कर!” सुरेशवा दर्द से कराहते हुए चीखा.

निशिकांत सुरेशवा को लेकर जैसे ही साकची स्थित सरकारी अस्पताल पहुँचे तो देखा, नागा भाई के आदमी पहले ही वहाँ पहुँच गए थे. उन्होंने जल्दी से सुरेशवा को निशिकांत की मोटरसायकिल से नीचे उतारा और उसको लेकर अस्पताल के इमरजेंसी वार्ड की तरफ भागे.

निशिकांत भी उनके पीछे-पीछे भागे.

निशिकांत इमर्जेंसी वार्ड में जैसे ही पहुँचे, सुरेशवा ने उनको इशारा करके अपने पास बुलाया और धीरे से बोला, “पंडित, तेरे को यहाँ कोई नहीं पहचानता. तू निकल यहाँ से. किसी को भी अपना नाम, पता मत बताना. अपनी मोटर सायकिल भी धुलवा लेना.”

इधर, निशिकांत जैसे ही बाहर निकलने के लिए मुड़े, नागा भाई का एक गुर्गा बोला, “कहाँ जा रहे हो? पुलिस को गवाही देना है कि तुम्हारे सामने ही सुरेश भाई को ठीकेदार सूरजभान त्रिपाठी अपना हाथ से

गोली मारा है।” लेकिन निशिकांत सुरेशवा के कहे अनुसार उसकी बात को नजरअंदाज करते हुए चुपचाप वहाँ से निकल गए।

तीन दिन बाद जब सुरेशवा के बुलावे पर निशिकांत उससे मिलने सरकारी अस्पताल पहुँचे तो देखा, सुरेशवा की हालत अब काफी ठीक थी और वह अपने बेड पर लेटे-लेटे नेशनल पनासोनिक के टेपरिकार्डर पर कोई पुराना गाना सुन रहा था।

थोड़ी देर इधर-उधर की बातें करने के बाद सुरेशवा बोला, “त्रिपाठी ठीकेदार को गोली काण्ड में नामजद करने को नागा भाई कह रहे थे, लेकिन हमने पीडब्ल्यूडी के मुख्य अभियंता मनोज महंती के साले को गोली चलाने वाले के रूप में पुलिस एफ़आईआर में नामजद करवा दिया है। मुख्य अभियंता मनोज महंती और उसका ठीकेदार साला, दुन्नो नागा भाई के आदमी हैं, इसीलिए नागा भाई हम पर भड़के हुए हैं।”

“लेकिन असल में तेरे पर गोली किसने चलाया था,” निशिकांत ने सवाल किया।

जवाब में सुरेशवा बोला, “पंडित, मुद्दा ई नहीं है कि गोली किसने चलाया था, बल्कि मुद्दा ई है कि इस कांड में किसको लपेटना है।”

“महंती के साले को लपेटने से तुमको क्या फायदा होगा?” निशिकांत ने जानना चाहा।

“तीन लाख रुपया और पीडब्ल्यूडी में ठीकेदारी के लिए रजिस्ट्रेशन! इस में से एक लाख रुपये की डिलेवरी भी हो गई है। मेरे तकिये के

बगल में रखे झोले में सौ-सौ के दस बण्डल है,” सुरेशवा फुसफुसाते हुए बोला. फिर उसे अचानक कुछ याद आया. वह बोला, “अबे पलट कर देख, बगल वाली बेड पर कौन लेटा है!

“हमलोग के स्कूल के हेड मास्टर साहेब! अरे, इनको क्या हुआ है?” निशिकांत आश्चर्य से बोले,

सुरेशवा ने जवाब दिया, “हार्ट अटैक!”

“इ तो निरामिष आदमी हैं, इनको हार्ट अटैक कैसे हो गया?” निशिकांत ने चौंकते हुए सवाल किया.

जवाब में सुरेशवा बोला, “अबे, लाइफ में बहुत टेंसन है. जवान बेटा नेतागिरी करते हुए बेरोजगार घूम रहा है. बेटी ब्याहने को है. बेचारी कल यहीं बैठ कर दुःख के मारे कलप रही थी कि पापा के ऑपरेशन का पैसा कहाँ से आएगा. इधर हेडमास्टर साहेब को चिंता है कि वे मर गए तो बेटी का ब्याह कैसे होगा.”

“तू एक काम कर, हेडमास्टर साहेब की बेटी थोड़ी देर में उनसे मिलने आएगी. तू उसको इस बण्डल में से पचास हजार रुपया थमा देना,” सुरेशवा आगे बोला.

“ऑपरेशन में कितना लगेगा?” निशिकांत ने पूछा.

“डेढ़ लाख के आसपास,” सुरेशवा ने उत्तर दिया.

“फिर पचास हजार में इनका काम कैसे होगा?” निशिकांत बोले।
“घबरा मत बे, मोहंती का साला और एक लाख लेकर आता ही होगा,”
सुरेशवा ने लापरवाही से उत्तर दिया।

“वो तो ठीक है भाई, लेकिन असल में तेरे पर गोली किसने चलवाई थी?” निशिकांत ने विषय बदलते हुए फिर से प्रश्न किया।

सुरेशवा बोला, “नागा भाई ने और किसने! वे त्रिपाठी ठीकेदार को मैनेज करना चाहते थे। दू दिन के दारू मुर्गा पार्टी का भारी कीमत मांग रहे थे हमसे। हमसे बिना पूछे हम पर गोली चलवा दिए, जैसे, हमारे खून का कौनो कीमते नहीं है?”

“अगर उनको मालूम होता कि हम उनकी बात नहीं मानेंगे तो मेरे पैर की जगह मुंडी में गोली मरवाते,” फिर, सुरेशवा हँसते हुए बोला।

“ई तेरा नागा भाई तो बड़ा कमीना टाइप के आदमी है यार,”
निशिकांत गुस्से से भर कर बोले।

सुरेशवा गंभीरता से बोला, “धंधा में कोई भी ‘कमीना’ या ‘शरीफ’ नहीं होता। सबकी अपनी-अपनी चालें हैं, अपने अपने दांव-पेंच हैं। जब शतरंज खेलते हैं तो सामने वाले को चाल चलने से तो नहीं रोक सकते न? नागा भाई ने अपनी चाल चली, हमने अपनी। अगर मेरा कलेजा छोटा होता तो उनके कहे पर चलते और जिन्दगी भर मुर्गा-दारू के बदले उनके लिए गोली खाते। मेरा कलेजा बड़ा है, इसलिए उनको चुनौती दे दिए।” निशिकांत स्तब्ध होकर उसकी बात सुनते रहे।

सुरेशवा आगे बोला, “मेरे बेड के नीचे रखा हुआ एक लाख रुपया त्रिपाठी का दिया हुआ है. ऊ नागा भाई का चाल समझ गया था, इसीलिए बिना कुछ कहे परसों रात में ही माल पहुँचवा दिया. कल सुबह-सुबह मुख्य अभियंता का साला भी खुद आया था, कह रहा था, “ मेरा नाम पुलिस एफआईआर से हटवा दो, जीजा से बोल कर तेरा पीडब्लूडी विभाग में रजिस्ट्रेशन करवा दूंगा.”

“तो तुमने क्या कहा?” निशिकांत ने पूछा.

सुरेशवा ने जवाब दिया, “हम बोले, दू लाख रुपया भी चाहिए. इलाज के लिए ऊ दू लाख रुपया देने को भी तैयार हो गया.”

“लेकिन भाई, महंती का साला बिना गोली चलवाए तीन लाख रुपया देने को क्यों तैयार हो गया?” निशिकांत ने हैरत से पूछा.

सुरेशवा बोला, “पैसे वाले अफसर लोग पुलिस और थाना से बहुत डरते हैं. मुख्य अभियंता मनोज महंती के पास दो नम्बर बहुत माल है. महंती का साला उसका पैसा ठीकेदारी में इन्वेस्ट करता है. अगर पुलिस इन्क्वायरी होगी तो मनोज महंती नपेगा. फिर दो लाख की डील दस लाख में होगी.”

वे इस विषय पर अभी कुछ देर और चर्चा करते तभी हेडमास्टर साहेब की बेटी सुरेशवा के बेड के पास आ गई और बहुत ही आत्मीयता से उसका हालचाल पूछने लगी.

इसी दौरान हेड मास्टर साहेब के नेता-पुत्र भी वहाँ पहुँच गए और बहन पर अपना इम्प्रेसन झाड़ते हुए बोले, “विधायक जी के पीए से

बात हो गई है। वो कहे हैं कि बाबूजी का ऑपरेशन विधायक फण्ड से हो जायेगा। विधायक जी पटना से विधान सभा सत्र में भाग लेकर जैसे ही आयेंगे, सब मैनेज हो जायेगा।”

हेडमास्टर साहेब की बेटी ने भाई से सवाल किया, “विधायक जी कब तक लौटेंगे भैया?” “पंद्रह दिन बाद, लेकिन कागजी कार्यवाही होते-होते एक महीना तो लग ही जाएगा,” हेडमास्टर साहेब के बेटे ने उत्तर दिया।

भाई का उत्तर सुन कर हेडमास्टर साहेब की बेटी का चेहरा लटक गया।

इधर सुरेशवा धीरे से निशिकांत से बोला, “अपना विधायक तो जनमतुआ बच्चा को भी आश्वासन का दूध पिला कर साल भर तक जिन्दा रख देता है।”

इधर, चार-पांच मिनट बक-बक करने के बाद हेडमास्टर साहेब के पुत्र वहाँ से रुखसत हो गए। उधर, उसके जाते ही सुरेशवा ने निशिकांत को इशारा किया। निशिकांत ने झोले में से पचास हजार रुपये के सौ-सौ के पांच बण्डल निकाल कर हेडमास्टर साहेब की बेटी के बैग में ठूस दिए। हेडमास्टर साहेब की बेटी को शायद पहले से ही इसकी उम्मीद थी। इसलिये उसने इसका प्रतिरोध नहीं किया। वह सिर्फ नम आँखों से सुरेशवा को अपलक देखती रही।

निशिकांत जब घर लौटे तो देखा उनके पिता रामधनी तिवारी बरामदे में पड़ी चौकी पर चुपचाप बैठे थे। अम्मा भी पास में ही बैठी थी।

हाथ में झोला देख कर अम्मा ने पूछा, “कुछ हरा सब्जी लेकर आये हो का?”

निशिकांत ने उत्तर दिया, “न अम्मा इसमें कुछ और है.” फिर वह जल्दी-जल्दी अपने कमरे में चले गए.

कमरे में पहुँच कर उन्होंने पैसे वाले झोले को अपनी किताबों के पीछे छिपा दिया.

इसके बाद, निशिकांत चुपचाप अपने बिस्तर पर लेट कर सोचने लगे, ‘सुरेशवा ने तीन लाख रुपये एक झटके में कमा लिए थे, और वे हैं कि डेढ़ लाख रुपये के लिए अपने बाप-दादा के खेत बेचने चले हैं. एक बार उनका मन किया कि सुरेशवा के साथ उसके धंधे में लग जाऊँ. ठीकेदारी कौनो अपराध थोड़े है?’ सोचते-सोचते कब उनकी आँख लग गई पता ही नहीं चला. शाम को जब नींद खुली तो नोटों को एक बार फिर से देखने का मन हुआ. वे आलमारी के पास गए. किताबों को उलट-पलट कर देखा तो घबरा गए. झोला वहाँ नहीं था. उन्हें लगा जैसे वे कोई सपना देख रहे हों.

उन्होंने खुद को चिकोटी काटी. वे जाग रहे थे. अब उनका कलेजा हलक तक आ गया था. वे कमरे से बाहर भागे.

“अम्मा मेरे कमरे में एक झोला था. तुमने उसे देखा है क्या?” वे पागलों की तरह चीखे.

“का बात है, काहे चिल्ला रहे हो?” पीछे से रामधनी तिवारी ने गमछे से हाथ पोंछते हुए पूछा.

“बाबूजी मेरे कमरे में एक ठो झोला था उसमें किसी दूसरे का रुपया था. लगता है, चोरी हो गया,” निशिकांत लगभग रोते हुए बोले.

बाबूजी ने गंभीरता से पूछा, “कितना पैसा था?”

‘पचास हजार रुपया’, निशिकांत बोले.

‘पचास हजार रुपया’ सुन कर अम्मा की सिसकारी निकल गई.

बाबूजी ने सवाल किया, “इतना रुपया कहाँ से लाया रे? बैंक में डकैती किया है क्या?”

डकैती की बात सुन कर अम्मा डर कर रोने लगी.

निशिकांत घबरा कर बोले, “बाबूजी रुपया सुरेशवा का है. हमको रखने के लिए दिया है.”

बाबूजी गंभीर शब्दों में बोले, “रुपया चोरी नहीं हुआ है. हमरे पास है. हम जानते हैं, ई रुपया दू नम्बर का है. इसलिए सारा रुपया हमने कही छिपा दिया है. पुलिस मेरे से कतनो मार-पीट करके भी पैसा बरामद नहीं करा पाएगी. लेकिन, तुम्हारा और तुम्हारी अम्मा का कलेजा बहुत कमजोर है. पुलिस का एक्को डंडा नहीं झेल पाओगे. सब बक दोगे. उसके बाद हम सबके कमर में पुलिस का रस्सा लग जायेगा.” फिर बोले, “जैसे ही सुरेशवा अस्पताल से लौटे, हमसे लेकर उसका सारा पैसा वापस कर देना और दुबारा इ गलती मत करना.”

रामधनी तिवारी आगे बोले, “सुरेशवा को तुम्हारे जैसा एक ठो भरोसेमंद बुरबक दोस्त चाहिये, जो दोस्ती के नाम पर उसकी मदद करे और

जेकरा पर पुलिस को शक भी नहीं हो. आज सुरेशवा तुमको रुपया रखने के लिए दे रहा है, कल हथियार देगा और परसों इसी घर में पनाह मांगेगा.”

निशिकांत भावुक होकर कर बोले, “सुरेशवा ऐसा नहीं है. पक्का दोस्त है मेरा. वह मुझे कभी धोखा नहीं देगा.” उत्तर में रामधनी तिवारी हँसते हुए बोले, “जब जान पर आएगी तो वह तुमको क्या अपने बाप को भी अपना मोहरा बनाएगा.”

निशिकांत ने अपने पिता से इस विषय पर ज्यादा बहस करना उचित नहीं समझा. निशिकांत तो इसी बात से राहत में थे कि पैसा चोरी नहीं हुआ है. प्रत्यक्ष में वह पिता की बातों से सहमति जताते हुए वहाँ से निकल गए.

शाम को जब निशिकांत सुरेशवा से मिलने अस्पताल पहुंचे तो देखा वहाँ दो पुलिसवाले पहले से बैठे हुए थे . पुलिस को देख कर उन्हें थोड़ी घबराहट हुई लेकिन हिम्मत करके वार्ड के दरवाजे पर ही खड़े रहे. उन्हें दरवाजे के पास खड़े देख कर सुरेशवा ने इशारे से अपने पास बुलाया. निशिकांत जब वहाँ पहुंचे तो सुरेशवा ने उनसे एक अफसर का परिचय कराया, “ई अमरेंदर सिंह दरोगा हैं. अपने ही गाँव के पास के हैं. हमारा फिर से बयान लेने आये हैं.” अमरेंदर सिंह ने मुस्कुराते हुए निशिकांत की तरफ देखा, और बड़े ही अपनत्व भरे लहजे में उनसे पूछा, “जब इनको गोली लगी थी, तब आप भी इनके साथ में थे क्या?”

अमरेंदर सिंह के अपनत्व को देख कर निशिकांत का मन हुआ कि सब सच-सच बोल दें. लेकिन तभी सुरेशवा बोला “अरे न भईया, ई त बैंकिंग की परीक्षा के तैयारी कर रहा है. कल्हे पटना से लौटा है. स्कूल में साथे पढ़ता था सो गोली लगने की खबर सुनकर हमारा हाल-चाल पूछने चला आया है.”

अमरेंदर सिंह दरोगा ने धीरे से सर हिलाया.

निशिकांत ने देखा, हेडमास्टर साहेब वाली बेड पर अब नया मरीज आ गया था. सुरेशवा ने बताया कि हेडमास्टर साहेब टाटा अल्लेपी ट्रेन से अपने हार्ट का ऑपरेशन कराने वेल्लूर जा चुके हैं. हेड मास्टर साहेब की बेटी भी उनके साथ गई है. उनका नेता पुत्र जमशेदपुर में ही रुक गया है. उसका कहना है कि वह जमशेदपुर में रह कर विधायकजी से वेल्लूर अस्पताल में फोन करवाएगा, जिससे कि वहाँ हेडमास्टर साहेब का इलाज में कौनो लापरवाही न हो.

टैंडर वाली घटना के लगभग चार महीने बाद एक सफ़ेद रंग की मारुति वैन निशिकांत के दरवाजे पर आकर रुकी. मकान के दरवाजे पर गाड़ी रुकने की आवाज सुनकर निशिकांत जब घर से बाहर निकले तो खुश हो गए. मारुति वैन में ड्राइवर के ठीक पीछे वाली सीट पर सूती की सफ़ेद बुशर्ट, आँखों में काला चश्मा और गले में सोने की चमचमाती हुई चेन पहने सुरेशवा बैठा हुआ था.

उन्हें बाहर आया देख सुरेशवा बिना किसी भूमिका के बोला, “चल बे पंडित, जुगसलाई से घूम कर आते हैं.”

निशिकांत भी कुछ बोले बगैर वैन का शटर खोल कर उसकी बगल वाली सीट पर बैठ गए. मन में खयाल आया कि जलनखोर पड़ोसियों की उनपर एक नजर जरूर पड़े. आखिर उनका दोस्त मारुति वैन लेकर उन्हें ले जाने आया था.

वैन अभी सड़क पर पहुंची ही थी कि सुरेशवा की नजर मोड़ की एक पान की दुकान पर खड़े मोहल्ले के एक पुराने दोस्त मनोरंजन मिश्रा पर पड़ी. सुरेशवा ने मनोरंजन मिश्रा को देख कर अपना हाथ हिलाया. उधर मनोरंजन मिश्रा वहीं से चिल्ला कर बोला, “क्या बे सुरेश, चारचकिया पर बैठ गया है तो पुराना दोस्त सब को भूल गया?” उत्तर में सुरेशवा बहुत ही अपनेपन से बोला, “तू भी आ जा भाई, जुगसलाई का एक राउंड लगा कर आते हैं.”

मनोरंजन मिश्रा ने सहमति की मुद्रा में अपना सर हिलाया और जल्दी से मारुति वैन की शटर खोल कर पीछे वाली सीट पर निशिकांत और सुरेशवा के साथ बैठ गया. पता नहीं क्या सोच कर सुरेशवा ने निशिकांत से कहा कि वह ड्राइवर के बगल वाली सीट पर आगे बैठ जाए.

निशिकांत जैसे ही आगे वाली सीट पर बैठे, ड्राइवर ने वैन तेजी से सड़क पर बढ़ा दी. इधर सुरेशवा ने वैन के बीच वाले दोनों काले शीशे चढ़वा लिए.

उनकी वैन जैसे ही बिष्टुपुर से जुगसलाई की तरफ बढ़ी, वोल्टास बिल्डिंग के पास, निशिकांत को लगा जैसे येज्दी मोटरसायकिल पर सवार दो लोग असामान्य रूप से मारुति वैन की बराबरी में चल रहे हैं, और वैन की खिड़की के काले सीसे के अंदर झाँकने की कोशिश कर रहे हैं.

इधर सुरेशवा की नजर भी मोटरसायकिल सवारों के ऊपर पड़ चुकी थी. आसन्न खतरे को भांपते हुए वह बिजली की फुर्ती से तेजी से नीचे झुका और मारुति वैन की आगे और पीछे की सीट के बीच वाली खाली जगह में दुबक कर बैठ गया. इसके अगले ही पल पूरी की मारुति वैन गोलियों की तड़तड़ाहट से झनझना उठी. निशिकांत को अचानक लगा जैसे मारुति वैन की पिछली सीट की दायीं वाली खिड़की से शोले निकल रहे हों. अचानक टक्कर की एक तेज आवाज हुई और एक जोरदार झटके के साथ मारुति वैन लड़खड़ाती हुई सड़क के किनारे जाकर रुक गई.

लगभग 10 मिनट बाद जब निशिकांत को होश आया तो उन्होंने सहमते हुए अपना सर ऊपर उठाया और अपनी दायीं ओर देखा. मारुति वैन का ड्राइवर मारुति वैन की स्टीयरिंग व्हील पर निश्चेष्ट पड़ा हुआ था. उन्होंने घबरा कर पीछे वाली सीट की तरफ देखा, तो उनकी आँखें आतंक से फटी की फटी रह गईं. पीछे वाली सीट पर मिश्रा मरा पड़ा था. ऐसा लग रहा था जैसे एक गोली उसकी कनपटी में लगी थी. मारुति वैन की दाहिनी तरफ का शटर खुला हुआ था और सुरेशवा मारुति वैन में नहीं था. निशिकांत ने असाधारण अवसाद

की अवस्था में अपनी आँखें बंद कर लीं और सीट पर निढाल होकर गिर पड़े.

कुछ देर बाद जब उनको फिर होश आया तो उन्होंने खुद को अस्पताल के एक कमरे में पाया. उन्होंने देखा कमरे में तीन-चार पुलिस वाले मौजूद थे. न जाने क्या सोच कर निशिकांत ने फिर से अपनी आँखें बंद कर लीं और वहाँ के माहौल को भांपने की कोशिश करने लगे. जल्दी ही उन्हें कमरे में मौजूद लोगों की बातचीत से ये स्पष्ट हो गया कि इस गोलीबारी में एक आदमी की जान गई थी और दो आदमी बुरी तरह घायल हुए थे. मतलब सुरेशवा जिन्दा था.

अगले दिन सुबह जब निशिकांत से मिलने के लिए बाबूजी अस्पताल आए तो बेहद सहमे हुए दिख रहे थे. उन्होंने बगैर किसी भूमिका के निशिकांत से सवाल किया, “मिश्राजी का लड़का तुमलोग के साथ क्या कर रहा था?” जवाब में निशिकांत ने मिश्रा के मारुति वैन में बैठने की पूरी राम-कहानी बाबूजी को सुना दी.

निशिकांत की पूरी बात सुनकर बाबूजी बोले, “अभी थोड़ी देर में पुलिस की तरफ से शुकुलजी तुम्हारा बयान लेने आयेंगे. उनसे कुछ मत छिपाना, सब कुछ सच-सच बता देना. वैसे तो वे हमारे रिश्तेदार हैं, लेकिन वे तुम्हारी मदद तभी करेंगे जब तुमने कोई गलती नहीं की होगी. ई घंटी बजा कर सत्यनारायण भगवान् की आरती गाने वाले पंडितजी नहीं हैं. एनकाउंटर स्पेशलिस्ट हैं. रोज सुबह एक घंटा दुर्गा

सप्तशती का पाठ करते हैं और उसके बाद उनके कपार पर काली माई सवार हो जाती हैं।”

वे फिर बोले, “शुकुलजी पक्का पंडित आदमी हैं। हर अपराधी का एनकाउन्टर करने के बाद अपना मुंडन संस्कार कराते हैं, और साल में एक बार बिहार के गया जाकर सबका आत्मा का शांति के लिए पिंडदान भी कर देते हैं।”

वह आगे बोले, “शहर में प्रचलित है कि शहर में जब कौनो क्रिमिनल को पुलिस सादा कपड़ा में उठाती है और महीना दिन तक उसका कौनो पता नहीं चलता है तो उसके परिवार का लोग शुकुलबाबा का मुंडी का बाल देखने उनके थाना में जाते हैं, और भगवान् से प्रार्थना करते हैं कि बाबा का मुंडी का बाल सलामत हो। अगर मुंडी का बाल सलामत नहीं है तो फिर ज्यादा पूछताछ का कौनो फायदा नहीं, सीधे-सीधे सराधकर्म कर दीजिये।”

निशिकांत को घबराया हुआ देख कर बाबूजी बोले, “हम तो पहले ही तुमसे कहे थे, सुरेशवा के चक्कर में रहोगे तो परेशानी होगी।”

निशिकांत ने हिम्मत बटोरते हुए पूछा, “सुरेशवा का क्या हुआ?”

बाबूजी खिसियाते हुए बोले, “अरे सुरेशवा का क्या होगा। बायाँ कन्धा में गोली लगा था, निकल गया है। दो चार दिन में अस्पताल से छुट्टी हो जाएगा। लेकिन बेचारे मिश्राजी का लड़का मरा गया। दू महीने बाद उसकी शादी होने वाली थी।”

इसी दौरान एरिया के सर्किल इंस्पेक्टर शुक्ला कमरे में आ गये. उनकी खाकी वर्दी और सफाचट सर को देख कर निशिकांत ने अनुमान लगाया कि ये ही बाबूजी के शुकुल बाबा होंगे. उन्हें आया देख कर बाबूजी चुपचाप अस्पताल के कमरे से बाहर चले गए.

निशिकांत ने उनके पैर छूने के लिए बेड पर से उठने की कोशिश की तो उन्होंने उठने से इशारे से मना कर दिया. फिर बड़े ही सहज भाव से पूछा, “जो लोग गोली चला रहे थे, उनको पहचानते हो?”

निशिकांत ने ‘नहीं’ की मुद्रा में सर हिलाया.

उन्होंने अगला सवाल किया, “अगर वे फिर कभी सामने आ जाएँगे तो पहचान लोगे?”

निशिकांत ने फिर ‘नहीं’ की मुद्रा में सर हिलाया.

फिर उन्होंने पूछा, “किसी पर शक है?”

निशिकांत ने इस बार भी ‘नहीं’ की मुद्रा में सर हिलाया.

इसके बाद चार-पांच औपचारिक सवाल पूछने के बाद सर्किल इंस्पेक्टर शुक्ला वहाँ से रुखसत हो गए.

अगले दिन सुबह-सुबह सुरेशवा लंगड़ाता हुआ निशिकांत के वार्ड में आया. आते ही उलाहने भरे स्वर में बोला, “क्या बे, भाई मर गया या जिन्दा है ई भी देखने के लिए अपना केबिन से बाहर नहीं निकला?”

निशिकांत ने रुंधे गले से जवाब दिया, “अबे, मिश्रा मर गया. दो महीने बाद उसकी शादी होने वाली थी.”

जवाब में सुरेशवा भावहीन होकर बोला, “हाँ भाई, मुझे भी बहुत दुःख हुआ. उसके बाबूजी अस्पताल में आकर मुझे भला-बुरा कह रहे थे. लेकिन मेरे को क्या पता था कि कौनो साला घात लगा कर बैठा है.”

निशिकांत ने पूछा, “क्या तुमको पता था कि तुमपर हमला हो सकता है?” सुरेशवा लापरवाही के साथ बोला, “अंदेशा तो था. इसीलिए तो वैन खरीदे थे ”

निशिकांत ने पूछा, “ये कौन थे?”

सुरेशवा ने उत्तर दिया, “जो भी थे, लोकल नहीं थे, हमको ठीक से पहचानते नहीं थे, वरना मिश्रा की जगह हम अस्पताल के मोर्ग में बर्फ खा रहे होते.”

निशिकांत ने अगला सवाल दागा, “कहीं ई काम नागा भाई का तो नहीं है न?”

सुरेशवा ने उत्तर दिया, “मेरे को नहीं पता. हो सकता है, नागा भाई को लपेटने के लिए उसका एंटी पार्टी का काम हो. वैसे भी अब शहर

का हर छोटा-बड़ा क्रिमिनल सब ठीकेदार बन गया है. कौन किस पर गोली चलवा रहा है, पता ही नहीं चलता. ई घंधा में 'दोस्त' और 'दुश्मन' का पता नहीं चलता."

निशिकांत ने पूछा, "तुम पुलिस के सामने किसका नाम लिए हो?"

"किसी का नहीं. भाई मेरे, हमको धंधा करना है, बदला-बदला थोड़े खेलना है," सुरेशवा गंभीर स्वर में बोला.

"लेकिन, मिश्रा जो मारा गया है?" निशिकांत ने सवाल दागा.

जवाब में सुरेशवा कुछ नहीं बोला बल्कि कुछ देर तक इधर-उधर की बातें करने के बाद वहाँ से रुखसत हो गया.

अगले दिन शाम को बाबूजी जब निशिकांत से मिलने अस्पताल आये तो बोले, "शुकुल बाबा सलाह दिए हैं कि बेटा को सुरेशवा की संगति से निकलवाइए नहीं तो मिश्रा की तरह किसी दिन बिना मतलब के गोली खा जाएगा और सुरेशवा इसका डेड बॉडी को अपना ढाल बना कर बच निकलेगा. शुकुल बाबा का कहना है कि सुरेशवा क्रिमिनल माइंडेड आदमी है, उसका सोहबत ठीक नहीं है"

निशिकांत को बाबूजी की यह बात उचित नहीं लगी कि सुरेशवा खुद को बचाने के लिए उनका ढाल की तरह इस्तेमाल करेगा, लेकिन उनकी यह बात कुछ हद तक ठीक थी कि सुरेशवा क्रिमिनल माइंडेड आदमी था. उनकी नजर में भी वह पैसा कमाने के लिए आपराधिक तरीके के खतरे उठा रहा था, और देर-सबेर उनपर भी इसका असर

पड़ना तय था. इसलिए उनका उससे थोड़ी दूरी बना कर चलना जरूरी हो गया था.

इस घटना के बाद से निशिकांत ने सुरेशवा से थोड़ी दूरी बनानी शुरू कर दी थी. अब उनकी मुलाकातों का सिलसिला होली-दीपावली तक सीमित होने लगा था. लेकिन निशिकांत, सुरेशवा को अब भी अपना पक्का दोस्त समझते थे. उनकी असली परेशानी सुरेशवा के नजरिये को लेकर थी. उनकी नजर में सुरेशवा 'पैसा' और 'शोहरत' के पीछे पगलाया हुआ बिजनेसमैन था, जो क्राइम का इस्तेमाल बिजनेस को आगे बढ़ाने के लिए कर रहा था.

इधर, अब गोली कांड के अब दो साल बीत गए थे. मनोरंजन मिश्रा की हत्या की फ़ाइल धूल फांकने लगी थी. कहते हैं , किसी बाहुबली ने फोन पर मनोरंजन मिश्रा के पिता से अनजाने में हुई ब्रह्म हत्या के लिए माफ़ी भी मांग ली थी. और अब, मनोरंजन मिश्रा के पिता इस हत्या को एक एक्सीडेंट मान कर भूलने की कोशिश कर रहे थे.

दूसरी तरफ, इन दो सालों में सुरेशवा ने जबरदस्त तरक्की की थी. उसने मोहल्ले के नए लड़कों को अपने साथ जोड़ कर अपना एक छोटा-सा गिरोह भी बना लिया था, जो उसका सुरक्षा घेरा बन कर चलते थे. सुरेशवा अपने गिरोह के इन लड़कों को अपनी कंपनी में छोटी-मोटी नौकरियां दे देता या पेटी-कांटेक्टर बना कर अपने साथ जोड़े रखता.

सुरेशवा एक अलग बिजनेस मॉडल पर काम कर रहा था. वह जानबूझ कर ऐसे नक्सली इलाकों में रोड बनाने के बड़े-बड़े ठेके ले रहा था,

जहाँ बड़े ठीकेदार भी जाने से कतराते थे. उसे इसके दो फायदे थे. पहला ये कि नक्सली इलाकों में सड़क निर्माण में रिस्क होने कारण प्रतियोगिता कम थी और दूसरा यह कि नक्सल प्रभावित इलाकों में बनी सड़कों की गुणवत्ता की सरकारी जाँच भी लगभग नहीं के बराबर होती थी.

सुरेशवा के टूटे-फूटे मकान की जगह अब एक शानदार हवेलीनुमा मकान बन रहा था. वह मोहल्ले के मंदिरों में जमकर चंदे देता. वह आस-पास के गरीब लोगों की मदद में भी सबसे आगे रहता. अब वह मोहल्ले के हर छोटे-बड़े सामाजिक समारोहों में शामिल होता. उसके न्योते का लिफाफा दिनों-दिन भारी होता जा रहा था. अब सुरेश ठीकेदार मोहल्ले का नया मसीहा था जो शादी-ब्याह से लेकर मरने-जीने तक हर काम में मोहल्ले के लोगों का सहयोग कर रहा था. सुरेशवा धीरे-धीरे मोहल्ले के नए लड़कों के बीच एक रोल मॉडल के रूप में स्थापित होने लगा था. मोहल्ले के कई अभिभावक तो अब अपने बेटों को सुरेशवा के रास्ते पर चलने की प्रेरणा भी देने लगे थे. जमशेदपुर में व्यवसाय और अपराध के परस्पर गठजोड़ की सामाजिक स्वीकृति का दौर आरम्भ हो रहा था. ये अस्सी के दशक का चतुर्थार्ध था.

सुरेशवा की पैसे की भूख कम होने की जगह और बढ़ रही थी. वह इस अवधारणा पर काम कर रहा था कि जो छोटानागपुर के जल, जंगल और जमीन पर कौड़ी के मोल कब्ज़ा करेगा, वही पठार पर राज करेगा.

एक दिन निशिकांत एक विशेष कार्यवश सुरेशवा से मिलने उसके घर पहुंचे. सुरेशवा ने उनसे बड़ी ही आत्मीयता से पूछा, “क्या बे पंडित, कहीं सरकारी नौकरी लगी?”

निशिकांत ने उदास लहजे में जवाब दिया, “ नहीं भाई!”

सुरेशवा मजाकिया लहजे में बोला, “देख, निशिकांत भाई, अब तुम्हारे सामने तीन ठो रास्ता है. फुटपाथ पर पकौड़ी-आलूचाप का ठेला लगाओ, बर्गर लाल की तरह तीन हजार रुपये में कंपनी में ठेका मजदूरी करो या फिर संतोष पांडे की तरह, पिता की जगह कंपनी बहादुर के यहाँ अस्थाई मजदूर बन जाओ, इस उम्मीद में कि रिटायरमेंट तक तुम्हारी नौकरी पक्की ज़रूर हो जाएगी.”

उनको खामोश देख कर सुरेशवा ने गंभीरता के साथ कहा, “एक और रास्ता भी है. मेरे साथ आ जाओ. हम सरकार के नाक के नीचे से सारंडा का ‘साल’, स्वर्णरेखा का ‘बालू’ और सिंहभूमि का ‘पहाड़’ लूटेंगे. हम भी छोटा-मोटा कंपनी बहादुर बनेंगे. हम वही करेंगे, जो कंपनी बहादुर पिछले 100 साल से कर रही है. इसमें कोई मैनेजमेंट नहीं है. सिर्फ ‘चालाकी’ और ‘दिलेरी’ है. कौड़ी के मोल जमीन के अन्दर से आयरन ओर निकलवाओ और सोने के भाव बेचो.”

वह आगे बोला, “अबे, कम्पनी बहादुर, बिहार सरकार से दस पैसा स्क्वायर मीटर के हिसाब से खदान लीज पर लेती है. पब्लिक और बैंक से लोन लेकर कारखाना खोलती है. फिर यहीं के मजदूर भर्ती करके लोहा, कोयला, अबरख, ताम्बा, अलमुनियम खदान से निकलवा कर सोना के मोल दुनिया भर में बेचती है. मतलब ई कि जमीन

सरकार का, पैसा पब्लिक का, मेहनत मजदूर का और प्रॉफिट साला कंपनी बहादुर का!”

उसने अपना बोलना जारी रखा, “आज अगर सरकार का नियम बदल जाए और खदान का लीज महंगा हो जाए तो कंपनी का टाईवाला साहेब लोग का बिजनेस मैनेजमेंट अन्दर घुस जायेगा. भाई मेरे, मेरा मन कह रहा है, टाइम बदलेगा. पठार में कंपनी का कंपटीटर जरूर आएगा. कंपनी बहादुर का मोनोपोली जरूर टूटेगा. हम लोग को सिर्फ किसी बड़ा पार्टी को समझा-बुझा कर पैसा लगाने के लिए पठार में लाना होगा, उसको कारखाना लगाने के लिए जमीन दिलाना होना.”

जवाब में निशिकांत दृढ़ता के साथ बोले, “हमसे नहीं होगा गरीब आदिवासी सब का जमीन का दलाली का काम.”

उसके बाद एक झटके के साथ कुर्सी से उठते वक्त उन्होंने अचानक ही सुरेशवा के सामने अपनी शादी का कार्ड रखा और बोले, “27 जून को बारात चलना है. चार साल से शादी का दबाव था. सोचा था नौकरी मिलने के बाद करेंगे. लेकिन अब नौकरी मिलने से तो रही. बाबूजी कहते हैं कि शादी में एक-दो साल और लेट हो जाएगा तो शदियो नहीं होगा.”

फिर वे अधिकार भरे स्वर में बोले, “अबे, तेरी दोनों कारें भी बारात में जाएँगी.”

जवाब में सुरेशवा मजाक भरे लहजे से बोला, “पंडित, तू मुझे इनवाईट करने आया है या मेरी कारों को.?.....और बेटा, कुंवारे तो अब हम भी नहीं रहे. रूक साले, तू भी अपनी भाभी के हाथ के चाय पीता जा.”

उसने जोर से आवाज लगाई, “मैडम! निशिकांत के लिए चाय लेकर पधारें, प्लीज!”

थोड़ी देर बाद एक महिला साड़ी पहने हुए बरामदे में दाखिल हुई. उसने हाथ जोड़ कर निशिकांत प्रणाम किया.

महिला का चेहरा देखते ही निशिकांत की सीसकारी निकल गई. ये हेडमास्टर साहेब की बेटी अलकनंदा थी.

सुरेशवा हँसते हुए बोला, “परसों ही कोर्ट मैरेज किये हैं, हम लोग! इनके बड़के भैया इनका विवाह कोनो थर्ड क्लास लड़का से 2 लाख रुपया में तय किये थे. ये हमको खोजती हुई एक महीना पहले यहाँ आई थीं. तब से यहीं पर हैं. जिस दिन ये हमारे यहाँ पधारी थीं, उसी दिन शाम को हेडमास्टर साहेब भी यहाँ पधारे थे. जब हमने उनके सामने, अलकनंदा से शादी का प्रस्ताव रखा तो वे सहजता से मान गए.”

“लेकिन तुम दोनों का कास्ट तो अलग है बे. हेडमास्टर साहेब कैसे मान गए?” निशिकांत ने चौंकते हुए पूछा. “ई त मैडमजी ही बतायें तो ठीक रहेगा,” सुरेशवा हँसते हुए बोला.

अलकनंदा ने जो कुछ बताया वह बेहद हृदयस्पर्शी था.

उसने बताया था, “मेरी शादी के लिए पापा शहर के हर काबिल स्वजातीय लड़के के दरवाजे पर गए. लेकिन, कम से कम दस बार मुझे देख कर स्वजातीय लड़केवालों ने शादी से इनकार कर दिया. हर बार असली मुद्दा दहेज़ का होता था और बहाना मेरा रंग-रूप बनता.

वह आगे बोली, “लगभग दो महीने पहले भईया ने मेरा विवाह दिल्ली के किसी अनजान लड़के से 2 लाख रुपया में तय कर दिया था. भईया किसी की बात मानने को तैयार ही नहीं थे. तब महीना भर पहले, पापा एक दिन खुद ही हमसे बोले, “बेटी, तू स्वयं लड़का पसंद करके शादी कर ले. जिस जात-बिरादरी के लोग अपनी ही जाति की लड़की के बाप को गरीब समझ कर इज्जत से अपने यहाँ बैठाते नहीं है, उस जात-बिरादरी के इज्जत के नाम पर हम अपनी बेटी की बलि नहीं देगे. बाकी, बिरादरी में जिसको जो कहना हो कहे.”

निशिकांत ने सवाल किया, “आपके बडका भाई क्या कर रहे हैं?”

वह धीरे से बोली, “करेंगे क्या? सोच रहे होंगे, चलो, बला टली!”

निशिकांत की शादी के कुछ महीने बाद होली के दिन सुरेशवा के घर पर यँ ही चर्चा चल रही थी. सुरेशवा धीरे-धीरे विलायती की चुस्की ले रहा था. अचानक विलायती के शुरू ने उसे फिलोस्फर बना दिया. वह बोला, “पंडित, दुनिया में सिर्फ दो तरह के लोग होते हैं. एक जो शोषण करते हैं और दूसरे वो जिनका शोषण होता है. बाकी तीसरा कोई होता नहीं यार! हम लोगों के सामने कोई तीसरा विकल्प नहीं है. अगर शोषण करने से संकोच करोगे तो कोई दूसरा तुम्हारा शोषण करेगा.”

फिर वह हाथ नचाते हुए बोला, “सिस्टम ही ऐसा है कि कोई बच नहीं सकता- मरो या मारो!”

वह नशे में झूमता हुआ बोला, “पंडित, तू मर जाएगा, तेरे जैसे शरीफ और ईमानदार आदमी को लोग जिन्दा नहीं छोड़ेंगे.” वह आगे बोला, “पंडित, मेरे भाई, मेरे यार, मेरे साथ आ जा. मिल कर लूटेंगे पठार को. भाई मेरा सपना है पठार का सबसे बड़ा बिजनेसमैन बनने का. इसमें रिस्क तो है लेकिन फायदा भी बहुत है. तू जितना बोलेगा उतनी सैलरी दूंगा. तेरे को पठार का चप्पा-चप्पा का पता है. तू पठार को समझता है. तू गाँववाला सबको समझा फैक्ट्री के लिए वे अपनी जमीन बेच दें. जमीन का दलाली में करोड़ों रुपया है.”

निशिकांत ने तल्खी से जवाब दिया, “हमने तो तुमसे पहले ही कह दिया है कि पठार का जल, जंगल और जमीन का दलाली हमसे नहीं होगा.” फिर वे दृढ़ता से बोले, “इससे पहले कि तेरे जैसा कोई बिजनेसमैन अपने घटिया सपने को पूरा करने के लिए मुझे नौकरी पर रख ले, मुझे जीने का कोई बेहतर मकसद तलाशना होगा.”

तभी सुरेशवा की पत्नी बरामदे में आ गई. उसकी गोद में लगभग एक साल की प्यारी सी बच्ची थी. वह सुरेशवा की तरफ इशारा करते हुए निशिकांत से बोली, “ ई पगला गए हैं. न जाने कितना पैसा चाहिए इनको? सोते जागते हर वक्त दुनिया मुट्ठी में करने की रट लगाये रहते हैं. हर समय बेचैन रहते हैं. न रात भर ठीक से खुद सोते हैं और न दूसरों को.”

लेकिन सुरेशवा होश में कहाँ था जो उसकी बात समझ सके.

इधर 1991 के आर्थिक उदारीकरण ने कंपनी बहादुर को भी जड़ से झकझोर दिया था. अब कंपनी भी अपना खर्च कम करने के लिए

स्थायी मजदूरों की संख्या तेजी से कम कर रही थी. दरअसल स्वयं कंपनी भी बाजार के बदलते रुख से हतप्रभ थी और आधुनिकीकरण और कर्मचारियों की संख्या कम करके बाजार में बने रहना चाहती थी.

लेकिन वास्तव में कंपनी में काम करने वाले मजदूरों की संख्या कम नहीं हो रही थी, अलबत्ता उसके स्थायी मजदूरों की जगह ठेका मजदूर जरूर ले रहे थे.

इसका एक पहलू और भी था. जिस कंपनी के आरंभिक नियोक्ताओं ने गरीब और अनपढ़ मजदूरों को स्थायी मजदूर के रूप में नौकरी देकर उनकी जिन्दगी बदल दी थी और दुनिया के सामने व्यवसाय का एक महान मानवतावादी चेहरा प्रस्तुत किया था, अब बदलते माहौल में उसी कंपनी में उसके ही अपने अनपढ़ स्थायी मजदूरों के स्नातक बेटे 'ठेका-मजदूर' बन गए थे.

1991 बाद के वर्ष शहर की एक पूरी पीढ़ी के लिए गंभीर अनिश्चितता के वर्ष थे.

निशिकांत ने तेजी से बदलते हालात को चुनौती के रूप में लिया था. वे समझ गए थे कि अब उन्हें कंपनी में पिता की जगह नौकरी भी नहीं मिलने वाली. किन्तु वे अपनी पूरी जिन्दगी किसी महत्वकांक्षी उद्योगपति के जल, जंगल और जमीन को लूट कर अमीर बनने के सपने को पूरा करने लिए खर्च करने को तैयार नहीं थे. इसलिए उन्होंने पठार के शहरी क्षेत्रों में स्तरीय स्कूली शिक्षा के प्रचार-प्रसार को अपने कार्य-क्षेत्र के रूप में चुना.

उनकी NGO ने 1996 में अपना पहला अंग्रेजी स्कूल जमशेदपुर में खोला. फिर तो सिलसिला चल पड़ा. वे खामोशी से अपना काम करते रहे. वे शहर के किसी एक इलाके में स्कूल खोलते और उसे दो तीन सालों में विकसित करते और फिर वहीं के शिक्षित, जिम्मेदार, और अनुभवी युवाओं को उसका प्रबंधन सौंप कर किसी अन्य इलाके में स्कूल खोलने के लिए निकल पड़ते.

पिछले पच्चीस सालों में उन्होंने राज्य के अलग-अलग शहरों में बीस से ज्यादा बेहतरीन स्कूल खोले. लगभग दो दशकों के उनके कठिन परिश्रम का परिणाम यह था कि अब लोग निशिकांत को एक सम्मानित सामाजिक कार्यकर्ता के रूप में जानने लगे थे. अब उनके पास सुख-सुविधा के तमाम साधन थे. उन्होंने अब अपना पुराना घर बेच कर शहर के सबसे महंगे आवासीय परिसर में 2000 स्क्वायर फीट का नया फ्लैट भी ले लिया था. इसी फ्लैट के गृहप्रवेश के लिए वे अपने बूढ़े दादा रामसनेही तिवारी को लिवाने के लिए अपने पुश्तैनी गाँव पहुंचे थे.

नवम्बर 2016 : जमशेदपुर

वयोवृद्ध पंडित रामसनेही तिवारी अपने पोते निशिकांत के नए फ्लैट के गृह प्रवेश के अवसर पर जमशेदपुर पधारे हैं. कमर झुक गई है, दाढ़ी के नीचे पावभर मांस लटक गया है, लेकिन आँखों में पुरानी चमक अब भी बरकरार है.

आज दीपावली है और निशिकांत के मोहल्ले के वाले घर में शाम को अंतिम बार लक्ष्मीपूजा का आयोजन होना है.

शाम होते ही रोबिन ब्लू वाली झक-झक सफ़ेद धोती-कुरता पहन कर रामसनेही तिवारी, लक्ष्मीपूजा कराने के लिए आसनी पर बैठे. पहले गणपति की पूजा की. उसके बाद वे जैसे ही लक्ष्मीपूजा के लिए उद्धत हुए, उनकी नजर लक्ष्मीजी की मूर्ति की आँखों की तरफ गई. वे अचकचा कर बोले, “अरे निशिकांत, ई कैसी मूर्ति लाया है रे, जिसमें लक्ष्मी जी बईठे- बईठे सो रही हैं ? फिर वे आश्चर्य से बोले, “अरे ई त गणेशजी जी भी सो रहे हैं.” पीछे से निशिकांत ने धीरे से कहा, “बाबा ई चाइना मेड गणेश-लक्ष्मी हैं. ई सोये नहीं हैं, बल्कि इनका आँखवे अईसने है.”

गणेश और लक्ष्मीजी की मूर्ति का स्वरूप देख कर रामसनेही तिवारी का मन खराब हो गया. गाँव में अगर किसी यजमान के यहाँ गए रहते तो पूजा पर से उठ जाते, लेकिन यहाँ तो घर की बात थी. सालों बाद बेटे-पोते के यहाँ गाँव से आये थे. इसलिए विवेक से काम लेते हुए चुपचाप पूजा कराने लगे.

इधर रामसनेही तिवारी लक्ष्मीपूजा में ध्यान-मग्न थे, उधर निशिकांत की बेटी और पत्नी मोबाइल फोन पर अपने दोस्तों को दीपावली की शुभकामनायें देने में व्यस्त थीं.

घंटे भर तक पूजा चलती रही. इस दौरान पूजा में शामिल परिवार के लोग ऊबते रहे. फिर निशिकांत की पत्नी धीरे से निशिकांत को ऊंगलियों से कोंचते हुए बोली, “लगता है, बाबाजी आज अपना पूरा पंडिताई दिखाईए के मानेंगे?”

इधर रामसनेही तिवारी के कानों में जब यह फुसफुसाहट पहुंची तो उन्होंने समझदार बुजुर्ग की भांति कोई प्रतिक्रिया ने देते हुए पूजा जल्दी-जल्दी समाप्त कर लक्ष्मी माता की आरती गाना शुरू कर दिया.

उधर जैसे ही लक्ष्मीजी की आरती समाप्त हुई, निशिकांत की बेटी और पत्नी ने वाट्सएप्प पर अपनी सेल्फी पोस्ट करना शुरू कर दिया.

ब्यूटी को घंटेभर में मोबाइल फोन पर तीसरी बार सेल्फी लेकर सोशल मीडिया पर पोस्ट करते देख कर पहले से ही खिसियाये पंडितजी से रहा न गया. बिना किसी भूमिका के ब्यूटी को संबोधित करते हुए बोले, “ बेटी, एक ठो था कैसानोवा. यूनान का रहे वाला था. एक दिन पोखर में स्नान करने गया तो पोखर के पानी में अपना मुँह देख कर खुद पर लड्डू हो गया. उसके बाद रात-दिन बस पोखरा के किनारे पड़ा रहता और अपना मुँह पोखरा के पानी में निहारता रहता. फिर एक दिन अपनी अम्मा से बोला, “ अम्मा हम शादी-ब्याह नहीं करेंगे और हमारी सुन्दरता पर सिर्फ हमारा हक रहेगा.”

रामसनेही तिवारी आगे बोले, “अब उसकी अम्मा कोई अहीरटोली की झगरू राय की मेहरारू थोड़े थी कि डाईन, बिसाखिन के नाम पर कैसानोवा को पकड़कर रामसकल ओझा के देहरी पर झाड़-फूंक करवाने पहुँच जाती. ऊ तो असली यूनानीन थी. बोली ‘भाड़ में जाओ गदहऊ, हम त चले नाचे!’ वे आगे बोले, “ऊ उधर नाचे गई और इधर कैसानोवा ससुरा फिर पहुँच गया पोखर किनारे, आपन मुँह निहारे. भूखे-पिआसे कई दिन तक ऊ पानी में अपना मुँह निहारता रहा... निहारता रहा. अचानक कमजोरी से ओकरा माथा में चक्कर आया और पोखर में लुढ़क गया. हमेशा के लिए!”

रामसनेही तिवारी हँसते हुए बोले “ बियुटी बेटी, तुम अंग्रेजी इस्कूल में पढ़ी हो इसलिए यूनान का कहानी सुनाया हूँ. एक ठो एकदमे खालिस हिन्दुस्तानी कहानी भी है. बानरमुँह नारद का. सुनाये का?”

जवाब में ब्यूटी ने अपने लेटेस्ट एंड्राइड फोन को अपने जींस की पिछली जेब में जबरदस्ती धकेला और विनम्रता के साथ बोली, “दादाजी वर्ल्ड बदल गया है, और समय के साथ सबको बदलना ही पड़ता है.”

समय बदलने की बात पर रामसनेही तिवारी ने हँसते हुए जवाब दिया, “त ठीक है बेटी, तुम “सेल्फी ले-ले रे.....” वाला गाना बजा दो..... और तुम्हारी अम्मा ‘कैसानोवा की अम्मा’ की तरह उस पर डांस करेगी!”

उनकी बात सुनकर निशिकांत ने मुस्कराते हुए अपनी पत्नी की तरफ देखा. पत्नी ने जल्दी से अपना मोबाइल फोन टेबल पर रखा और तुलसी के चौबारे पर दीपक रखने के लिए पूजाघर से आँगन की तरफ भागी.

अचानक रामसनेही पांडे ने हतप्रभ ब्यूटी से एक सवाल किया, “बेटी, ये बताओ, दुनिया भर में गरीब और अनपढ़ लोग ‘मशीन’ की वजह से ज्यादा मर रहे हैं या ‘मशीनगन’ से?” परन्तु, उन्हें उत्तर देने के बजाय ब्यूटी आश्चर्य से अपने परदादा की तरफ देखने लगी. उसे हाल में ही पढ़ी गांधीजी की प्रसिद्ध किताब ‘हिन्द स्वराज’ की याद ताजा हो गई.

नवम्बर में गृहप्रवेश की पूजा खत्म होने के बाद ब्यूटी ने रामसनेही तिवारी से अनुनय करके उन्हें दो-तीन महीने के लिए जमशेदपुर में ही रोक लिया.

दरअसल, परिवार के लोग उन्हें गाँव में अकेले रहने देना ही नहीं चाहते थे, लेकिन रामसनेही तिवारी गाँव छोड़ने के लिए बिलकुल ही तैयार नहीं थे. 13 मार्च को होली थी. निर्णय यह हुआ कि 11 मार्च को निशिकांत का परिवार मोहल्ले वाले पुराने घर को छोड़ कर रिहायशी इलाके में खरीदे गए नए फ्लैट में शिफ्ट हो जाएगा. उसके बाद ही उन्हें वापस गाँव जाने दिया जाएगा.

दो मार्च की सुबह निशिकांत को अखबार देखकर अचानक याद आया कि कल इस औद्योगिक नगर के संस्थापक का जन्मदिन है. सारा शहर रंगीन बल्बों से सजाया जाएगा. अतः उन्होंने ब्यूटी से कहा, “बेटा, कल दादाजी को जुबली पार्क जरूर घुमा देना. कल वहाँ रंगीन बल्बों से शानदार सजावट होगी.” जवाब में ब्यूटी ने अपनी स्वीकारोक्ति दे दी.

अगले दिन शाम के वक्त जब रामसनेही तिवारी ब्यूटी की स्कूटी की पिछली सीट पर बैठकर जुबली पार्क के गेट पर पहुंचे तो देखा, चाइना मेड बल्ब की रोशनी में पूरा पार्क जगमगा रहा था. पार्क ही नहीं बल्कि पार्क के बाहर भी शहर के पूर्वी हिस्से में आकाश का एक बड़ा हिस्सा लाल रोशनी में नहाया हुआ था. सारे आकाश में हरे, पीले, नीले,

लाल और न जाने कितने रंगों के बादलों के टुकड़े रंगीन गुब्बारों की शक्ल में अटखेलियाँ कर रहे थे.

हजारों की भीड़, पार्क की जगमगाती रोशनी का भरपूर आनन्द ले रही थी. लोगों की भीड़ में ब्यूटी की पुरानी क्लास-टीचर सागरिका सेन भी थी, जो अपने बच्चों के साथ पार्क में घूम रही थी. संस्थापक की मूर्ति के निकट ब्यूटी और राम सनेही तिवारी से उसकी मुलाकात हुई. मिलनसार स्वभाव की सागरिका टीचर थोड़ी ही देर में बुजुर्ग रामसनेही तिवारी से घुल-मिल गई.

बातचीत के क्रम में वह रामसनेही तिवारी को संबोधित करते हुए बोली “ददाजी, शहर के बीचो-बीच खड़ी नगर संस्थापक की आदमकद पाषाण प्रतिमा की निष्प्राण आँखों में आज संस्थापक दिवस के दिन अजब सी जीवंतता है. लगता है जैसे बोल पड़ेंगी!”

रामसनेही तिवारी मुस्कराते हुए बोले, “अरे टीचरजी, ई जीवंतता असल में चाइना मेड बल्ब का लाईट का कमाल है. संस्थापक बाबा के आँख में चाइना मेड बल्ब का लाईट चमचमा रहा है. अगर इनको मौका मिल जाये त ई आप लोग को गरियाते हुए सबसे पहले शहर छोड़ कर चल देंगे.”

वे आगे बोले, “बताइए, छोटका संस्थापक बाबा शहर में इतना पेड़-पौधा और फूल-पत्ती लगवाकर, शहर के बीच में पार्क बनवा कर, बड़का बाबा का मूर्ति लगवाए और आपलोग पेड़ कटवा-कटवा कर, स्कूल-कॉलेज सब तोड़वा कर कम्पनी का एक्सटेंशन करवा रहे हैं.”

फिर उन्होंने प्रश्न किया, “बोलिए, बड़का संस्थापक बाबा ऐसे माहौल में कैसे रहेंगे भला?”

उधर सागरिका टीचर भी हार मानने के मूड में नहीं थी, बोली “अरे ददाजी, शहर के पोल्युशन के लिए बहुत कुछ हो रहा है. आप जिस सड़क पर खड़े हैं न, वह सड़क रिसाइकिल्ड प्लास्टिक से बना है. सोचिये, हमलोग कितना बड़ा काम कर रहे हैं.”

रामसनेही तिवारी गंभीर होते हुए बोले, “‘हमलोग’ मने ‘आम आदमी’. अगर आम आदमी इतना जागरूक होता तो शहर का ईं हालां न होता. आपलोग ने सबकुछ ‘कंपनी’ और ‘सरकार’ पर छोड़ दिया है.”

ईं शहर के 15 लाख लोग का ‘नदी’ और ‘नगर’ के प्रति कौनो जिम्मेदारी न है का?” रामसनेही तिवारी ने सवाल किया.

वे आगे बोले, “मामला सिर्फ एक कंपनी का नहीं है, जमशेदपुर शहर का अगल-बगल में 500 कंपनी है, सब मिल कर कर शहर के लिए भस्मासुर बन गए हैं.”

फिर वह चेताते हुए बोले “अगर ईं सब को ठीक नहीं किया गया तो आपका शहर का सड़क, नाली, बाजार, पार्क सब चमचमाता रह जायेगा और शहर का आदमी पलुशन के कारण दम घुटने से मर जाएगा. फिर व्यंग्य से बोले, “नीचे करिया रंग का पानी ढोती दुबली-पतली, जीवन-विहीन खरकई नदी, ऊपर से पांच सौ ठो कंपनी के चिमनी से निकलते गैस के रंग बिरंगे फुलौने, और बीच में प्लास्टिक के कचरे से बनी पर्यावरण सड़क, आपके शहर को तो नोबेल पराइज मिले के चाही!”

अब ब्यूटी ने सवाल किया, “दादाजी, तो क्या करे सरकार? सभी कम्पनियों को बंद करवा दे? क्या इससे लाखों लोगों की रोजी-रोटी का आधार खत्म नहीं हो जाएगा?

रामसनेही तिवारी गंभीरता के साथ बोले, “अगर बिना बड़ा कारखाना का पंजाब, हरियाणा का विकास हो सकता है तो आपका राज्य का काहे नहीं? अगर बिजनेसमैन को सरकार पहले 10 साल के लिए जमीन लीज पर दे और कह दे, इसमें खान, खदान नहीं खोदना है, लोहा का फैक्टरी नहीं लगाना है, अगर करना है त फार्म खेती कीजिये. कोल्ड स्टोरेज बनवाइए, जड़ी-बूटी का कम्पनी खोलिए, दवाई का फैक्ट्री खोलिए, फल का खेती कीजिये, मधुमक्खी पालन कीजिये, लाह का उत्पादन कीजिये, सब्जी का पोरसेसिंग कीजिये. जो बिजनेस करना है कीजिये, लेकिन इससे हमारा राज्य और समाज परदुसित नहीं होना चाहिए, वरना जमीन वापस कीजिये और वापस जाइए.”

वे आगे बोले, “लेकिन हमको मालूम है उद्योगपति सब, यहाँ इतनी आसानी से ईसब बिजनेस नहीं करेंगे. उनके मन में घोर लालच है. उनको तो इहाँ का लोहा, कोयला, अलमुनियम, ताम्बा चाहिए..... नदी, बालू, खेत, जंगल सब चाहिए ऊ भी फोकट में!”

परसों नए फ्लैट में शिफ्ट करने की योजना है. घर के सभी लोगों को ब्यूटी के खड़गपुर से आने का इन्तजार है. लेकिन सुबह दस बजे ब्यूटी का फोन आता है, “पापा हम नहीं आ पायेंगे. कल से ही मेरी पीएचडी की कोर्स-वर्क शुरू हो रही है.”

दरअसल ब्यूटी चार दिन पहले ही खड़गपुर गई थी. वहाँ उसका सेलेक्शन देश के एक श्रेष्ठ तकनीकी शिक्षण संस्थान में 'पीएचडी' कोर्स के लिए हुआ था.

पिता से फोन पर बातचीत के क्रम में वह अनपेक्षित सा सवाल करती है, "हमलोगों का पुश्तैनी गाँव कहाँ है, पापा?"

निशिकांत ने असमंजस से भर कर उल्टा सवाल करते हैं, "क्या बात है बेटी?" "अरे कुछ नहीं पापा, कल हमारे संस्थान में पीएचडी रिसर्च स्कॉलर्स की इंडक्शन मीटिंग थी. मीटिंग के बाद रिसर्च बोर्ड के सदस्यों से परिचय के दौरान हमारे इंस्टिट्यूट के डायरेक्टर प्रोफेसर दयाशंकर गुप्ता ने मुझसे यही सवाल किया था."

वह आगे बोली, "हमने तो कह दिया- जमशेदपुर! लेकिन प्रोफेसर दयाशंकर, मेरे जवाब से संतुष्ट नहीं थे. उन्होंने कहा था कि इसका जवाब तुम अपने पिता से पूछ कर बताना."

निशिकांत बोले, "गाँव बभनटोली, जिला बक्सर, बिहार!"

"लेकिन पापा हमारा संविधान तो कहता है कि हम सब भारतीय हैं. अगर हर कोई अपने-अपने गाँव की पहचान के लिए इतना तत्पर हो जाए तो हमारा देश टुकड़ों में बंट जाएगा," ब्यूटी आशंका प्रकट करते हुए बोली.

निशिकांत बोले, "देश के लाखों गाँव ही भारत की संस्कृति की जड़ें हैं. अगर गाँव की पहचान खत्म हो गई तो हमारी प्राचीन भारतीय संस्कृति भी खत्म हो जायेगी. वे फिर बोले, "हड़प्पा, मोहनजोदड़ो,

पाटलिपुत्र, विजयनगर सभी नागरी सभ्यताएँ समय के साथ धूल में मिल गईं. किन्तु, देश की ग्राम्य-संस्कृति अनवरत देश की संस्कृति की विरासत को संजोती रही और इसे एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हस्तांतरित करती रही. शहर की संस्कृति क्षणभंगुर है और गाँव की 'शाश्वत', 'सनातन' और 'निरंतर'!"

फिर वह ब्यूटी से प्रश्न करते हैं, ग्रामविहीन आधुनिक भारत कैसा होगा भला?"

ब्यूटी हँसते हुए कहती है, "अगर बड़के बाबा होते तो कहते, "वैसे ही जैसे बाबा विश्वनाथ के बिना काशी". निशिकांत हँसते हुए बोले, "अब तो तुम भी अपने बड़के बाबा की भाषा में बोलने लगी हो."

आज निशिकांत का अपने पुराने मोहल्ले में आखरी दिन है. कल उन्हें सपरिवार नए फ़्लैट में शिफ्ट कर जाना है.

आज उन्हें रूपा याद आ रही है. उन्हें मोहल्ले की शादियाँ और छठ का त्यौहार याद आ रहा है. लेकिन उन्हें आज अपना सबसे जिगरी दोस्त सुरेशवा सबसे ज्यादा याद आ रहा है, जिसे करीब 25 साल पहले इसी मोहल्ले में उसके घर से बाहर खींच कर गोली मार दी गई थी.

उन्हें इंस्पेक्टर शुकुल बाबा याद आते हैं, जिनसे वह आखरी बार सन् 1995 में सुरेश के मर्डर केस के दौरान मिले थे. तब पितृपक्ष चल रहा था, फिर भी इंस्पेक्टर शुकुल बाबा के सर पर बड़े-बड़े बाल थे. जाहिर तौर पर वे इस बार पिंडदान करने 'गया' नहीं गए थे.

इस सम्बन्ध में निशिकांत के पूछने पर इंस्पेक्टर शुकुल बाबा हँसते हुए बोले थे, 'मुंडन, पिंडदान! ई सब अफवाह है. हमलोग कानून का हिसाब से काम करते हैं. वैसे भी शूटर सब का एनकाउन्टर करने से क्या फायदा? "एक शूटर का इनकाउन्टर करेंगे तो उसकी जगह लेने लिए दस और बेरोजगार लोग तैयार बैठे हैं. हाथ में एक झोला लिए, कन्धे पर गमछा लटकाए हुए दो लोग पटना-टाटा एक्सप्रेस से सुबह नौ बजे टाटानगर स्टेशन पर उतरेंगे, दोपहर में जुबली पार्क में घूमेंगे और शाम को अपना टारगेट का काम तमाम करके, रात सवा सात बजे वाली टाटा-पटना एक्सप्रेस की जेनरल बोगी के पखाने के बगल में गमछा बिछाकर सो जायेंगे. जब तक पुलिस महकमा नाकेबंदी करेगा तब तक उनकी ट्रेन आद्रा स्टेशन पार कर चुकी होगी. अगले दिन दोपहर को वे किसी मंत्री या विधायक के पटना वाले आवास पर ताश खेलते हुए मिल जायेंगे."

"वो तो ठीक है, परन्तु मेरी आपसे प्रार्थना है कि सुरेशवा के हत्यारे को सजा मिलनी ही चाहिए....." निशिकांत ने अनुरोध किया था. तब, निशिकांत की बात को बीच में ही काटते हुए इंस्पेक्टर शुकुल बाबा बोले थे, "देर-सबेर तो अपराधी पकड़ा ही जाएगा. लेकिन मुझे सुरेशवा से कोई ज्यादा सहानुभूति नहीं है. आज की तारीख में शहर में पचासों सफेदपोश अपराधी, बिजनेसमैन बन कर घूम रहे हैं और ये भाड़े के अनजान शूटर उनके हथियार हैं. सुरेश ठीकेदार भी इन सफेदपोश अपराधियों में से एक था. कौन जाने, मरने से पहले सुरेशवा ने खुद भी भाड़े के हत्यारों की मदद से कितनों को ठिकाने लगवाया होगा. हमें इसकी पक्की खबर थी कि सुरेश ठीकेदार,

अंडरवर्ल्ड की मदद से अपने धंधे को फैला रहा था. उसकी तरक्की की रफ्तार, नए लड़कों को सम्मोहित कर रही थी. सुरेश जैसे अपराधी प्रवृत्ति के व्यापारी पूरा जनरेशन को बर्बाद कर रहे हैं. नए लड़के इनको अपना आदर्श मानते हैं. अगर सुरेशवा जैसे लोगों का बुरा अंत नहीं होगा तो शहर की पूरी भावी जनरेशन बर्बाद हो जायेगी.”

शुकुल बाबा आगे बोले थे, “तुम्हारा दोस्त कमाने की जल्दी में था. उसे इस पठारी प्रदेश के गांवों, पहाड़ों, जंगलों और खेतों को बेचने की जल्दी थी. लेकिन लगता है, वह शायद तालाब के गंदले पानी में पहले से ही घात लगा कर बैठे अपने से बड़े घड़ियालों को भांप नहीं पाया था. निश्चित तौर पर सुरेश इनमें से ही किसी एक का शिकार बना.”

“लेकिन क्या सुरेशवा को मारने वाला घड़ियाल कभी पकड़ा जाएगा?” निशिकांत ने जिज्ञासा प्रगट की थी.

तब, शुकुल बाबा चेतावनी भरे शब्दों में निशिकांत से बोले थे, “एक को पकड़ कर क्या होगा? इनसे पूरा का पूरा तालाब भरा पड़ा है. आदिवासी, गैर-आदिवासी सबको मिलकर इनके खिलाफ एक संगठित अभियान चलाना होगा, वरना कल अगर ये सभी घड़ियाल आपस में मिल कर अपना सिंडिकेट बना लें, और फिर, पैसे और आतंक के दम पर प्रशासन और सरकार को नियंत्रित कर लें तो पूरा का पूरा पठार बीस-तीस साल के अंदर कंगाल हो जाएगा. जंगल, खेत, नदी, पहाड़ सब खत्म हो जायेंगे. यह पूरा क्षेत्र तबाह हो जाएगा.”

इसी क्रम में उन्हें निशिकांत को सुरेशवा की पत्नी अलकनंदा की याद आती है. उसकी पत्नी अलकनंदा ने दुबारा शादी नहीं की थी. आज

वह अपने वयोवृद्ध पिता हेडमास्टर साहेब के साथ मिलकर अपने घर में बच्चों का एक स्कूल चलाती है। सुरेशवा की बेटी स्निग्धा अब बड़ी हो गई है। अलकनंदा ने अपनी बेटी को अच्छे संस्कार दिए थे। वह टाटा इंस्टिट्यूट से सोशल साइंस की पढ़ाई करने के बाद झारखण्ड के आदिवासी इलाके में एक एनजीओ चलाती है।

फिर, उन्हें अपने बचपन का दोस्त पंकूलाल याद आता है, जो उनकी क्लास का सबसे पढ़ाकू लड़का था। उसे एमएससी गोल्ड मेडलिस्ट होने के बाद भी ठेका-मजदूर बनना पड़ा था। उन्हें संतोष पांडे याद आता है, जो कंपनी में अपने पिता की जगह स्थायी नौकरी पाने की उम्मीद में पिछले 15 सालों से देहाड़ी मजदूर के रूप में कंपनी बहादुर की सेवा कर रहा है और उसका 24 साल का बेटा अपने दादा नन्हकू पांडे के रिटायरमेंट के पैसे से इंजीनियरिंग की डिग्री लेकर 8000 रुपये मासिक पर एक कॉल सेंटर में नौकरी करता है।

उसके दादा नन्हकू पांडे अपने घर के बरामदे की खिड़कियों पर नए परदे लगवा कर, पलंग पर नया चद्दर बिछा कर अपने इंजीनियर पोते की शादी के लिए लड़की वालों का इन्तजार कर रहे हैं। लेकिन, दुल्हों के बाजार में इंजीनियर दामादों की सप्लाई ज्यादा और डिमांड कम हो गई है। उधर पोता खुद ही मेट्रीमोनियल साइट्स पर अपने लिए 'कमाऊ पत्नी' खोज रहा है और सोशल मीडिया पर चिल्ला-चिल्ला कर कह रहा है कि 'दहेजप्रथा समाज के लिए कलंक है'।

निशिकांत का मन एक अजीब उदासी में डूब जाता है। वे सोचते हैं, "स्वतंत्रता प्राप्ति के पहले देश में लाखों जमींदार थे और करोड़ों किसान उनके गुलाम थे। देश जब आजाद हुआ और जमींदारी प्रथा

खत्म हुई तो जमींदारों की जगह कारखानेदारों ने ले ली थी. किसान के बेटे अब मजदूर बन गये थे. लेकिन 1991 के बाद मशीनों ने तेजी से इन मजदूरों की जगह ली और मजदूर तेजी से बेरोजगार होने लगे. सन् 2000 आते-आते मजदूरों के इंजिनियरिंग और एमबीए डिग्रीधारी बेटे सेल्समैन बन गए. लेकिन हालात यहीं नहीं थमों. साल 2016 आते-आते देश का वास्तविक बाजार क्षेत्र इंटरनेट पर सिमटने लगा और सन 2000 के सेल्समैन, अब डिलेवरीबॉय बन कर घर-घर सामान पहुँचाने लगे.

बदलते हालात में लोगों को जिन्दा रखने के लिए कोई नशा जरूरी था. 1980 और 1990 के दशक में टेलीविजन ने इस जरूरत को पूरा किया और 21वीं सदी में स्मार्टफोन यही कर रहा है, जिसके प्रभाव में आज पूरी की पूरी युवा पीढ़ी बेसुध हो कर दुनिया को अपनी मुट्ठी में कैद करने के सपने देख रही है. वे आज के तथाकथित प्रबंधन गुरुओं की सलाह के बारे में सोचते हैं, 'बड़े सपने देखो, अथक प्रयास करो और दुनिया को अपनी मुट्ठी में कर लो.' उन्हें हँसी आ जाती है. बड़े सपने, इतने व्यक्तिगत! इतने आत्मकेंद्रित!

वह रामचरितमानस के रचयिता गोस्वामी तुलसीदास के 'स्वान्तःसुखाय' के बारे में सोचते हैं, 'तुलसी का 'स्व' इतना 'निःसीम' है जिसमें समस्त ब्रह्माण्ड समाहित हो जाता है.

अंत में वे खुद पर केन्द्रित होते हैं. वे अपनी पिछली 20 साल की उपलब्धियों का लेखा-जोखा करते हैं-राज्य के शहरी इलाकों में बीस से ज्यादा अंग्रेजी माध्यम के स्कूल! उनका मन सवाल करता है, ये स्कूल तो पठार के सुदूर गाँवों में भी खोले जा सकते थे, लेकिन

उन्होंने ऐसा क्यों नहीं किया? क्या अच्छी शिक्षा की जरूरत सिर्फ शहरी बच्चों को थी? उत्तर सोच कर उनका मन आत्मग्लानि से भर उठता है.

घोर निराशा के भाव के साथ वे पोर्टिको से अपनी कार निकलते हैं और उसे बिना किसी पूर्वयोजना के अपने पुराने कॉलेज की दिशा में मोड़ देते हैं.

कॉलेज की अब नयी बिल्डिंग बन गयी है. वे थोड़ी मशक्कत के बाद हिंदी के विभागाध्यक्ष प्रो० अमृत का घर खोज पाते हैं. दरवाजे पर दस्तक देते समय उनका पुराना छात्रवत संकोच वापस लौट आता है.

थोड़ी देर बाद ही, हाथ में बीयर का एक भरा मग लिए हुए प्रोफेसर अमृत स्वयं दरवाजा खोलते हैं और कहते हैं, “आओ निशिकांत, हमने सीसीटीवी में तुम्हारा चेहरा देख लिया था.” निशिकांत उनके चरण छूने के लिए झुकते हैं. वे धीरे से पीछे हट जाते हैं और कहते हैं, “इन औपचारिकताओं से बचो बरखुरदार!”.

थोड़ी देर की गपशप के बाद प्रोफेसर अमृत उनसे आने का प्रयोजन पूछते हैं. निशिकांत संकोच भरे शब्दों में कहते हैं, “गुरुजी, अजीब सी ऊब, बेबसी और उदासी मन में घर कर गई है. सफलता अब खुशी नहीं देती. उपलब्धियां मन में और भी ज्यादा सन्नाटा भर देती हैं, लगता है जैसे जिन्दगी रसहीन हो गई है. कुछ नया करने का मन होता है, लेकिन क्या करूँ कुछ समझ नहीं पा रहा.”

“तुम्हें क्यों लगता है कि मैं तुम्हें कोई रास्ता दिखा सकता हूँ?”, प्रोफेसर गंभीरता से प्रश्न करते हैं.

निशिकांत आदर के साथ कहते हैं, “आप मेरे गुरु हैं, आप जो सलाह देंगे, वह सही होगा मेरे लिए”

“अगर गुरु हूँ तो गुरु का आदेश समझ कर अमृतपान करो,” कहते हुए वह बीयर का भरा हुआ एक मग निशिकांत की तरफ बढ़ाते हैं.”

निशिकांत संकोच के साथ कहते हैं, “सर, हम अब नहीं पीते!” उत्तर में प्रोफेसर अमृत ठठा कर हँसते हैं, “मैं तो तुम्हारा गुरु हूँ. मेरी दी हुई हर चीज तुम्हें स्वीकार्य होनी चाहिए.”

निरुपाय से निशिकांत उनके हाथ से मग लेने के लिए अपना हाथ आगे बढ़ा देते हैं, लेकिन, प्रोफेसर अमृत बीयर का मग निशिकांत के हाथ में सौंपने की बजाय वापस टेबल पर रख देते हैं और कहते हैं, “जरूरी नहीं कि मेरी हर सलाह सही ही हो. तुम वयस्क हो, खुद मूल्यांकन करो”

वे गंभीर होकर कहते हैं, “जानता हूँ तुमको और तुम्हारे एनजीओ की उपलब्धियों को. हर सप्ताह तुम्हारे एनजीओ की खबरें स्थानीय अखबारों में छपती हैं. तुम जिस एनजीओ को जनजीवन में बदलाव का साधन मानते हो, मैं उसे जनता के आक्रोश को कम करने वाला सेफ्टी वाल्व मानता हूँ, जो आम जनता के अन्दर बदलाव की एक झूठी आस जिन्दा रख कर उसे व्यवस्था के खिलाफ विद्रोह करने से रोकती है.”

वह बेबाकी से कहते हैं, “निशिकांत, तुम वैसे व्यक्ति हो जो बिना कुछ खोये, बिना जोखिम उठाये समाज-सुधारक बनकर आत्मसंतुष्टि पाना चाहता है. यही तुम्हारी बेबसी और ऊब की वजह है.”

“तो क्या पिछले बीस-पचीस सालों की मेरी सेवा निरुद्देश्य रही है?” निशिकांत उदास होकर प्रश्न करते हैं.

“ऐसा तो तुम ही सोचते हो, वरना मेरे पास नहीं आते. दरअसल तुम्हारा सबसे बड़ा गुरु, तुम्हारा अन्तर्मन है. वही तुम्हें यहाँ लेकर आया है. वही तुम्हें आगे भी ले जाएगा. तुम्हें चेंज की नहीं बल्कि सार्थक बदलाव की तलाश है. जबतक तुम इस गलतफहमी से बाहर नहीं निकलोगे कि तुम एकरसता से ऊबे हुए व्यक्ति हो, तुम नएपन की तलाश में एक मंजिल से दूसरी मंजिल तक भागते फिरोगे और फिर एक दिन तुम्हारा अतृप्त मन तुम्हें लील जाएगा. बिना उचित लक्ष्य के यात्रा बेकार है,” प्रोफेसर अमृत गंभीरता के साथ उनके सवाल का उत्तर देते हैं. अंत में वे निशिकांत को समझाते हुए कहते हैं, “अब समाजसेवी होने का ढोंग त्यागो और बाकी बची जिन्दगी में कुछ सकारात्मक और ठोस काम करो.”

फिर, वह अचानक अपनी कुर्सी से उठ कर किताबों से भरी आलमारी की तरफ रुख करते हैं, और आलमारी में से एक पुरानी किताब निकाल कर वापस कुर्सी पर बैठ जाते हैं. फिर वे नोबेल पुरस्कार विजेता कवि पाब्लो नेरुदा की एक कविता ‘*You start dying slowly*’ को जोर-जोर से बोल कर पढ़ने लगते हैं.

“आप धीरे धीरे मरने लगते हैं,

अगर आप नहीं महसूस करना चाहते आवेगों को,
और उनसे जुड़ी अशांत भावनाओं को,
वे जिनसे नम होती हैं आपकी आँखें,
और करती हैं तेज़ आपकी धड़कनों को.

आप धीरे धीरे मरने लगते हैं,
अगर आप नहीं बदल सकते हैं अपनी ज़िन्दगी को
जब हों आप असंतुष्ट अपने काम और परिणाम से,
अगर आप अनिश्चित के लिए नहीं छोड़ सकते हों निश्चित को,
अगर आप नहीं करते हों पीछा किसी स्वप्न का,
अगर आप नहीं देते हों इजाज़त खुद को,
अपने जीवन में कम से कम एक बार,
किसी समझदार सलाह से दूर भाग जाने की ...”

निशिकांत वापस घर लौटते हैं. वह आंगन में आकर खाली पड़ी हुई कुर्सी पर बैठ जाते हैं और पास पड़ा हुआ अखबार उठा कर उसपर नजरें गड़ा देते हैं. लेकिन, अचानक उनकी नजर दादा रामसनेही तिवारी पर पड़ती है. रामसनेही तिवारी घर के आंगन के एक कोने में आम का पौधा रोप रहे हैं. निशिकांत हँसते हुए कहते हैं, “बाबा, कल तो ई घर छोड़िये देना है, अब ई सब का कौनो फायदा नहीं.” रामसनेही तिवारी उनकी ओर देखे बगैर जवाब देते हैं, “तू अपनी सलाह अपने पास रख, हमको अपना काम करने दे.”

निशिकांत बिना कुछ कहे अखबार की खबरों पर फिर से अपनी नजरें गड़ा देते हैं. किन्तु, थोड़ी ही देर बाद उनकी निगाहें फिर से रामसनेही तिवारी की तरफ उठ जाती हैं. रामसनेही तिवारी अब लगभग सूख चुके तुलसी के एक पौधे की जड़ों में अंजुरी भर-भर कर जल डाल रहे हैं. निशिकांत को शाम के धुंधलके में अस्सी साल के बूढ़े दादा के दमकते चेहरे में पाब्लो नेरुदा की कविता *"You start dying slowly"* का सार नजर आ रहा है. आज उनकी इच्छा इस महान कविता में दो नयी पंक्तियाँ जोड़ने की होती है.

“आप धीरे धीरे मरने लगते हैं,
अगर आप नहीं देते हों इजाज़त खुद को,
अपनी संस्कृति की सूखती जड़ों में,
अंजुरी भर जल डालने की.”

उन्हें अपने अन्दर एक छोटा सा ज्योतिपुंज जलता सा प्रतीत होता है.

निशिकांत के मोहल्ले वाले घर का सारा सामान ट्रकों में लादा जा चुका है. घर से बाहर निकलते हुए निशिकांत अपने पुराने घर को डबडबाई आँखों से निहारते हैं. फिर घर की देहरी की मिट्टी को उठा कर माथे पर लगाते हैं. इसके बाद वे अपनी कार की ड्राइवर वाली सीट पर बैठ कर बेल्ट बांधने लगते हैं. उनकी बगल वाली सीट पर उनके पिता रामधनी तिवारी बैठे हैं. पिछली सीट पर दादा रामसनेही तिवारी, निशिकांत की अम्मा और निशिकांत की पत्नी बैठी हैं.

कार जैसे ही आगे बढ़ती है, रामसनेही तिवारी निशिकांत से पूछते हैं, “केतना घंटा समय लगेगा बभनपुरा पहुँचने में?” “शाम के सात बजते-बजते हम अपने गाँव पहुँच जायेंगे,” निशिकांत जवाब देते हैं. निशिकांत के पिता आगाह करते हैं, “ शहर में सबकुछ छोड़कर, गाँव में नए सिरे से काम खड़ा करना आसान नहीं होगा. इसमें बहुते रिस्क बा बेटा.”

निशिकांत आत्मविश्वास भरे लहजे से जवाब देते हैं, “बाबूजी, गंगा की मिट्टी में मुट्ठी भर बीज रोपने पर मिट्टी चार महीने में मन भर अनाज लौटाती है. खेती से ज्यादा मुनाफा दूसरा कौनो काम में नहीं. वे आगे कहते हैं, “बाबूजी, असली चुनौती तो बक्सर से पटना के पहलेजा घाट तक गंगा की सफाई का है. अब हमारा एनजीओ इसी काम पर ध्यान लगाएगा. हजारों लोगों को जोड़ना होगा इस काम में. गंगा न सिर्फ हमारी अर्थव्यवस्था की रीढ़ है बल्कि हमारी पहचान भी है.

निशिकांत की बात सुनकर रामसनेही तिवारी धीर-गंभीर स्वर में कहते हैं, “कलजुग में कौनो एक भगीरथ के प्रयास से गंगा स्वच्छ थोड़े होगी. सबको भगीरथ बनना पड़ेगा.....लेकिन, सिर्फ गंगा ही काहे, देश की हर एक नदी को माँ गंगा जैसा सम्मान देकर उसकी पुरानी अस्मिता को वापस लौटाना होगा. ऋग्वेद के हिरण्यगर्भ स्तोत्रम् के अनुसार नीर से ही नर और नारायण का अस्तित्व है. फिर, वे आगे कहते हैं, “नदी हमारे जीवन, संस्कृति और अर्थव्यवस्था का आधार है. यदि नदी नहीं तो नगर भी नहीं और गाँव भी नहीं!”

निशिकांत कहते हैं, “सुरेश की बेटी स्निग्धा भी स्वर्णरेखा और खरकई की सफाई के लिए कोई बड़ा जन-जागरूकता अभियान चलाने की तैयारी में हैं. कल देर रात मेरी उससे फोन पर बात हुई थी. वह दुखी होकर कह रही थी कि प्राचीन काल में भगीरथ अपनी तपस्या से गंगा को स्वर्ग से धरती पर लेकर आये थे, किन्तु आज के भगीरथ छठपर्व के दिन ‘स्वर्णरेखा’ और ‘खरकई’ नदियों को अपने फ्लैट की छतों पर बने सीमेंट की टंकियों में कैद करने की युक्ति लगा रहे हैं.”

निशिकांत आगे कहते हैं, “हम तो ब्यूटी को भी सलाह देंगे की पीएचडी की पढ़ाई पूरी करके स्निग्धा के साथ जुड़ जाए. दोनों, खरकई और स्वर्णरेखा के संगम पर पैदा हुई हैं. पठार की इन गंगाओं का कर्ज है, उन पर. क्या पता, कुछ साल बाद जब उनके बच्चे खरकई के स्वर्णिम बालुका-राशि पर छठ के घाट बनाने के लिए कुदाल लेकर निकलें तो इसके स्वच्छ और पारदर्शी जल से भरी तलहटी में नाचती हुई मछलियाँ फिर से दिख जायें.” फिर वह प्रसन्नचित्त होकर कार का स्टीरियो सिस्टम ऑन कर देते हैं. होली का एक पारंपरिक लोकगीत हवा में तैरने लगता है.....

“कहाँ रंगवलs... पागरिया हो भोले बाबा,
कहाँ रंगवलs पागरिया.....??”

(इति)